उर्दू प्रेस की समीक्षा और विश्लेषण

वर्ष 9 | अंक 20 | 16-31 अक्टूबर 2026 | ₹ 20/-

इजरायल के चुनावों में अरब दलों की सीटें बढ़ीं



- फारूक अब्दुल्ला के पाकिस्तान-परस्त बयान पर बवाल
- मालदीव में पाकिस्तान का बढ़ता दखल
- इथियोपिया में ईसाई-मुस्लिम दंगों में 60 ईसाइयों की मौत
- जामिया मिल्लिया इस्लामिया में छात्रसंघ चुनाव की घोषणा

परामर्शदाता
डॉ. कुलदीप रतनू

सम्पादक
मनमोहन शर्मा*

सम्पादकीय सहयोग
शिव कुमार सिंह

कार्यालय
डी–51, प्रथम तल,
हौज खास, नई दिल्ली–110016
दूरभाषः 011–79687620

E-mail:
info@ipf.org.in
indiapolicy@gmail.com

Website:
www.ipf.org.in

मुद्रक–प्रकाशकः मनमोहन शर्मा द्वारा भारत नीति प्रतिष्ठान के लिए डी–51, प्रथम तल, हौज खास, नई दिल्ली–110016 से प्रकाशित तथा साई प्रिंटओ पैक प्रा.लि., ए–102/4, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस–2, नई दिल्ली–110020 से मुद्रित

*अनुवाद के लिए पूरी तरह जिम्मेदार

अनुक्रमणिका

सारांश 03

राष्ट्रीय

जामिया मिल्लिया इस्लामिया में 20 साल बाद छात्रसंघ चुनाव की घोषणा 04
फारूक अब्दुल्ला के पाकिस्तान-परस्त बयान पर बवाल 08
संघ प्रमुख के उद्‌बोधन की आलोचना 10
उत्तर प्रदेश में यूसीसी लागू करने का आश्वासन 13
महाराष्ट्र के धर्मांतरण कानून को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती 15

विश्व

मालदीव में पाकिस्तान का बढ़ता दखल 16
पाकिस्तान के ग्वादर में सैन्य शिविर पर बलूच विद्रोहियों का हमला 19
लश्कर-ए-तैयबा के शीर्ष कमांडर चौधरी मोहम्मद सरवर की मौत 20
भ्रष्टाचार के आरोप में बांग्लादेश के पूर्व वायुसेना प्रमुख गिरफ्तार 20
फ्रांस के मुस्लिम बहुल देश बनने की आशंका 21

पश्चिम एशिया

इजरायल के चुनावों में अरब दलों की सीटें बढ़ीं 23
पाकिस्तान, कतर, तुर्किये और इंडोनेशिया के बीच रक्षा समझौता 27
इथियोपिया में ईसाई-मुस्लिम दंगों में 60 ईसाइयों की मौत 28
लीबिया में ईरानी और अफगान नागरिकों के प्रवेश पर प्रतिबंध 29
मदीना यूनिवर्सिटी में 100 से अधिक इस्लामिक किताबों पर प्रतिबंध 30
10 हजार से अधिक भारतीय सऊदी अरब में फंसे 31

सारांश

इजरायल में हुए हालिया संसदीय चुनावों में किसी भी गठबंधन को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला है और वहां त्रिशंकु संसद की स्थिति बन गई है। 120 सदस्यीय संसद (नेसेट) में बहुमत के लिए 61 सांसदों का समर्थन आवश्यक है, जबकि प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू के नेतृत्व वाले गठबंधन को 53 और पूर्व सेना प्रमुख गादी आइजेनकोट के गठबंधन को 48 सीटें मिली हैं। शेष 19 सीटें इजरायल की अरब पार्टियों के खाते में गई हैं। अरब पार्टी 'राम' के अध्यक्ष मंसूर अब्बास ने घोषणा की है कि नेतन्याहू को सत्ता से बाहर रखने के लिए वे विपक्षी नेता आइजेनकोट के गठबंधन को समर्थन देने के लिए तैयार हैं। हालांकि, आइजेनकोट ने अब तक अरब पार्टियों का समर्थन लेने से इनकार किया है। भारत का उर्दू मीडिया इस बात का जश्न मना रहा है कि इजरायल की सत्ता की चाबी अब अरब और मुस्लिम जनप्रतिनिधियों के हाथ में आ गई है। गौरतलब है कि इजरायल के चुनावी इतिहास में अब तक हर बार त्रिशंकु संसद ही बनी है और गठबंधन सरकारें ही अस्तित्व में आई हैं।

मालदीव की राजनीति में आ रहे नए बदलावों से भारत की चिंताएं बढ़ना स्वाभाविक है। वर्ष 2023 से पहले मालदीव की सरकारों का रुख भारत के प्रति मैत्रीपूर्ण रहा था। हिंद महासागर में भारत की सामरिक सुरक्षा के लिए मालदीव का महत्वपूर्ण स्थान है। वहीं, मालदीव का व्यापार भारत पर निर्भर रहा है और भारतीय पर्यटक उसकी अर्थवस्था की रीढ़ रहे हैं, लेकिन 2023 के चुनाव में वर्तमान राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू ने 'इंडिया आउट' अभियान की आड़ में सत्ता हासिल की और इसके बाद कई ऐसे कदम उठाए जो भारत के हित में नहीं थे। राष्ट्रपति पद की शपथ लेते ही मुइज्जू ने मालदीव की पुरानी परंपरा को तोड़कर सबसे पहले चीन का दौरा किया और कई समझौते कर उसके लिए अपने देश के दरवाजे खोल दिए। रणनीतिक विशेषज्ञों का मानना है कि मालदीव में चीन की नौसैनिक गतिविधियां भी बढ़ रही हैं।

हाल ही में राष्ट्रपति मोइज्जू संभवत: चीन के इशारे पर पाकिस्तान के तीन दिवसीय दौरे पर इस्लामाबाद गए, जहां उन्होंने पाकिस्तानी सेना प्रमुख जनरल आसिम मुनीर, राष्ट्रपति आसिफ अली जरदारी और प्रधानमंत्री शहबाज शरीफ से मुलाकात की। इस दौरान दोनों देशों के बीच 20 समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। विडंबना यह है कि पाकिस्तान के प्रभाव में आकर मुइज्जू ने आठ देशों के संगठन दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) को फिर से सक्रिय करने की अपील की है। गौरतलब है कि 2016 के उरी आतंकी हमले के बाद भारत ने इस्लामाबाद में होने वाले सार्क सम्मेलन का बहिष्कार किया था, जिसके समर्थन में अफगानिस्तान, भूटान, बांग्लादेश और नेपाल भी सम्मेलन से हट गए थे। उल्लेखनीय है कि भारत ने हमेशा मालदीव के साथ मधुर संबंध बनाए रखने पर जोर दिया है। भारत अपने हर बजट में मालदीव के विकास के लिए बड़ी धनराशि आवंटित करता है और इसी वर्ष मालदीव के विदेशी मुद्रा भंडार को मजबूती देने के लिए तीन हजार करोड़ रुपये की मुद्रा अदला-बदली की सुविधा को भी आगे बढ़ाया है।

देश के प्रमुख शिक्षण संस्थान जामिया मिल्लिया इस्लामिया के छात्रों को छात्रसंघ बहाली और चुनाव की मांग को लेकर पिछले तीन सप्ताह से चल रहे आंदोलन में सफलता मिली है। यूनिवर्सिटी प्रशासन द्वारा छात्रों की मांगें स्वीकार किए जाने के बाद आंदोलन स्थगित कर दिया गया है। गौरतलब है कि जामिया में पिछले 20 वर्षों से छात्रसंघ चुनावों पर प्रतिबंध लगा हुआ था। इसी तरह अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी में भी पिछले आठ वर्षों से छात्रसंघ चुनाव रुके हुए थे, जहां छात्रों के आंदोलन के बाद प्रशासन ने चुनाव कराने की घोषणा कर दी है।

राष्ट्रीय

जामिया मिल्लिया इस्लामिया में 20 साल बाद छात्रसंघ चुनाव की घोषणा



इंकलाब (30 अक्टूबर) के अनुसार जामिया मिल्लिया इस्लामिया के छात्र पिछले तीन सप्ताह से जो विरोध प्रदर्शन कर रहे थे उसमें उन्हें सफलता मिली है। यूनिवर्सिटी प्रशासन ने छात्रों की मांगों को स्वीकार करते हुए छात्रसंघ का नया संविधान बनाने और चुनाव करवाने की विधिवत घोषणा कर दी है। जामिया प्रशासन के अनुसार छात्रसंघ का नया संविधान 15 मई 2027 तक तैयार कर लिया जाएगा। इसके बाद 16 जुलाई 2027 से शुरू होने वाले शैक्षणिक सत्र के छह सप्ताह के भीतर यूनिवर्सिटी में छात्रसंघ चुनाव कराए जाएंगे। प्रशासन ने यह भी घोषणा की है कि प्रदर्शनों के दौरान छात्रों के खिलाफ जो कार्रवाई की गई थी, उसे वापस ले लिया जाएगा। इसके साथ ही छात्र नेताओं के यूनिवर्सिटी परिसर में प्रवेश पर जो प्रतिबंध लगाया गया था, उसे भी रद्द कर दिया जाएगा। इसके साथ ही प्रशासन ने छात्रों से तुरंत भूख हड़ताल समाप्त करने की अपील की, जिसे छात्रों ने स्वीकार कर लिया।

हालांकि, एहतियात के तौर पर अभी भी भारी संख्या में सुरक्षाकर्मी यूनिवर्सिटी परिसर के बाहर तैनात हैं। रात के समय छात्राएं धरने पर बैठी रहीं और नारेबाजी करती रहीं। इन छात्राओं का कहना है कि जामिया प्रशासन द्वारा जनवरी तक के लिए कक्षाओं का जो ऑनलाइन शेड्यूल जारी किया गया है, वह उन्हें स्वीकार्य नहीं है। उनका कहना है कि "हमने कठिन परिश्रम के बाद प्रवेश परीक्षा पास करके दाखिला लिया है, इसलिए हम ऑनलाइन पढ़ाई स्वीकार नहीं करेंगे।"

जामिया मिल्लिया इस्लामिया के जिन तीन भूख हड़ताली छात्रों को तिहाड़ जेल भेजा गया था, उन्हें अभी तक रिहा नहीं किया गया है। कांग्रेस के छात्र संगठन नेशनल स्टूडेंट्स यूनियन ऑफ इंडिया (एनएसयूआई) के राष्ट्रीय अध्यक्ष विनोद जाखड़ ने इन तीनों छात्रों की तत्काल रिहाई की मांग की है।

इंकलाब (31 अक्टूबर) के अनुसार जामिया मिल्लिया इस्लामिया में छात्रसंघ की बहाली की घोषणा के बाद छात्रों ने परिसर में जुलूस निकालकर जश्न मनाया। इसके साथ ही यूनिवर्सिटी प्रशासन द्वारा ऑनलाइन कक्षाएं संचालित करने के निर्देश को भी जल्द ही रद्द किए जाने की संभावना है।

समाचारपत्र के अनुसार जामिया प्रशासन और छात्रों के बीच गतिरोध खत्म कर समझौता कराने में केरल से इंडियन यूनियन मुस्लिम लीग



के राज्यसभा सांसद हारिस बीरन की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। गौरतलब है कि 18 दिनों तक भूख हड़ताल का नेतृत्व करने वाले छात्र एबिन बेसिल का संबंध भी केरल से है। दूसरी ओर, इस आंदोलन के दौरान कुछ जनप्रतिनिधियों और पूर्व छात्रों की भूमिका को लेकर छात्र गुटों में नाराजगी भी देखी जा रही है। कुछ छात्रों का मानना है कि यदि पूर्व छात्र यूनिवर्सिटी प्रशासन पर समय रहते दबाव बनाते तो यह आंदोलन और जल्दी समाप्त हो सकता था। छात्र नेताओं का आरोप है कि आम आदमी पार्टी के विधायक अमानतुल्लाह खान की भूमिका भी संदेह के घेरे में रही, क्योंकि उन्होंने प्रशासन से तो मुलाकात की, लेकिन हड़ताली छात्रों से मिलने नहीं पहुंचे। इसी तरह जामिया के पूर्व छात्र और समाजवादी पार्टी के राज्यसभा सांसद जावेद अली खान की भी आलोचना की जा रही है। छात्रों का कहना है कि वे केवल परिसर में आए और एक वीडियो बनाकर वापस चले गए।

जामिया मिल्लिया इस्लामिया में छात्रसंघ चुनाव की बहाली पर विभिन्न छात्र संगठनों ने खुशी जाहिर की है। छात्रों को इस जीत की बधाई देने वालों में कांग्रेस का छात्र संगठन एनएसयूआई और वामपंथी छात्र संगठन ऑल इंडिया स्टूडेंट्स एसोसिएशन (आईसा) तथा स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया (एसएफआई) शामिल हैं। एसएफआई की केंद्रीय कार्यकारी समिति ने जामिया के छात्रों के संघर्ष की सराहना करते हुए उन्हें 'लाल सलाम' पेश किया है। इसके साथ ही इन छात्र संगठनों ने घोषणा की है कि वे जामिया की तर्ज पर देश भर के विभिन्न विश्वविद्यालयों में छात्रसंघ बहाल करने के लिए राष्ट्रव्यापी आंदोलन चलाएंगे।

उर्दू टाइम्स (31 अक्टूबर) के अनुसार कांग्रेस ने जामिया मिल्लिया इस्लामिया में छात्रसंघ चुनाव कराने की घोषणा का स्वागत किया है। कांग्रेस के राज्यसभा सांसद इमरान प्रतापगढ़ी ने इस फैसले को छात्रों के हौसले, दृढ़ निश्चय और लंबे संघर्ष की जीत करार दिया है। उन्होंने आरोप लगाया कि यूनिवर्सिटी परिसर में फिलिस्तीन और कश्मीर के समर्थन में जो विवादित नारे लिखे गए थे, उसके पीछे जामिया प्रशासन का सीधा हाथ था। प्रतापगढ़ी के अनुसार इस पूरी साजिश का उद्देश्य आंदोलनकारी छात्रों को बदनाम करना था।

हिंदुस्तान (27 अक्टूबर) के अनुसार शिवसेना (शिंदे गुट) के प्रवक्ता संजय निरुपम ने जामिया मिल्लिया इस्लामिया पर एक विवादित बयान देकर नया राजनीतिक तूफान खड़ा कर दिया है। उन्होंने आरोप लगाया कि जामिया अब एक



शैक्षणिक संस्थान के बजाय राजनीति का अड्डा बनता जा रहा है। हाल ही में यूनिवर्सिटी की दीवारों पर लिखे गए देशद्रोही नारे इस बात का प्रमाण हैं कि यह संस्थान 'मिनी पाकिस्तान' बनता जा रहा है। उन्होंने केंद्र सरकार और दिल्ली पुलिस से मांग की कि वे परिसर में होने वाली पाकिस्तान समर्थक गतिविधियों पर कड़ी नजर रखें।

संजय निरुपम के इस बयान की कड़ी आलोचना करते हुए **हिंदुस्तान** (28 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि भाजपा और उसके सहयोगी दल इन दिनों जनता में अपने खिलाफ बढ़ती नाराजगी से परेशान हैं, इसलिए वे किसी भी मुद्दे को सांप्रदायिक रंग देकर जनता को गुमराह करने में लगे हुए हैं। संपादकीय में कहा गया है कि छात्रसंघ चुनाव, शिक्षा और परीक्षा विशुद्ध रूप से शैक्षणिक और सामाजिक मुद्दे हैं, जो किसी धर्म, संप्रदाय या वर्ग तक सीमित नहीं हैं। निरुपम का यह बयान नफरत की राजनीति और सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने जैसा है। संपादकीय में आगे कहा गया है कि जामिया मिल्लिया इस्लामिया देश के स्वतंत्रता संग्राम और साझा संस्कृति का एक शानदार प्रतीक है। ऐसे प्रतिष्ठित संस्थान को 'मिनी पाकिस्तान' कहना गैर-जिम्मेदाराना और मुसलमानों के प्रति नफरत की मानसिकता को दर्शाता है।

मुंबई उर्दू न्यूज (30 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में जामिया मिल्लिया इस्लामिया में छात्रसंघ की बहाली का स्वागत किया है, लेकिन इस बात पर खेद भी जताया है कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के नेताओं द्वारा स्थापित यह यूनिवर्सिटी अब विवादों का केंद्र बन गई है। समाचारपत्र ने लिखा है कि जब देशवासी अंग्रेजों की गुलामी के खिलाफ संघर्ष कर रहे थे और छात्रों से इस आंदोलन में शामिल होने का आह्वान किया गया था तब अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी प्रशासन ने इसका विरोध किया। इसी की प्रतिक्रिया स्वरूप 29 अक्टूबर 1920 को अलीगढ़ में जामिया मिल्लिया इस्लामिया की नींव रखी गई। इस संस्थान की स्थापना में शेख-उल-हिंद मौलाना महमूद हसन, मौलाना मोहम्मद अली जौहर, हकीम अजमल खान, डॉ. मुख्तार अहमद अंसारी और अब्दुल मजीद ख्वाजा जैसे स्वतंत्रता सेनानी शामिल थे, जबकि डॉ. जाकिर हुसैन ने इसके विकास में अपना पूरा जीवन खपा दिया। समाचारपत्र ने इस बात की आलोचना की है कि इस ऐतिहासिक संस्थान को अब राजनीति का अखाड़ा बना दिया गया है। 2006 से छात्रसंघ पर प्रतिबंध लगाकर छात्रों को उनके लोकतांत्रिक अधिकारों से वंचित रखा गया।

उर्दू टाइम्स (27 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में आरोप लगाया है कि आरएसएस शिक्षण संस्थानों पर अपनी विचारधारा थोपने की राजनीति कर रहा है। समाचारपत्र के अनुसार जब शिक्षण संस्थानों के प्रमुखों, प्राध्यापकों की नियुक्ति और छात्रों के वैचारिक प्रशिक्षण को राजनीतिक उद्देश्यों से जोड़ दिया जाता है तो शिक्षा का मूल उद्देश्य ही खतरे में पड़ जाता है। मुस्लिम विश्वविद्यालयों में आरएसएस के बढ़ते प्रभाव से जुड़ी रिपोर्टें इसी चिंताजनक स्थिति की ओर संकेत करती हैं। इन रिपोर्टों के मुताबिक आरएसएस मुस्लिम बिरादरी में अपनी पैठ बढ़ाने और भाजपा

के लिए समर्थन जुटाने के उद्देश्य से विश्वविद्यालयों व शिक्षण संस्थानों के महत्वपूर्ण पदों पर अपनी विचारधारा से जुड़े लोगों की नियुक्ति करने का प्रयास कर रहा है। हाल ही में देश के दो प्रमुख विश्वविद्यालयों के कुलपतियों की नियुक्ति को इसी रणनीति के संकेत के रूप में देखा जा रहा है। यदि यह दावा सही है तो यह मामला केवल राजनीति तक सीमित नहीं है, बल्कि शिक्षण संस्थानों की स्वायत्तता पर भी गंभीर सवाल खड़े करता है।



संपादकीय में कहा गया है कि वर्तमान दौर में जब नफरत की राजनीति चरम पर है तब मुस्लिम विश्वविद्यालयों के प्रशासन को नियंत्रित करने और उन पर एक विशेष विचारधारा लादने के प्रयासों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, जामिया हमदर्द, कश्मीर यूनिवर्सिटी और मौलाना आजाद राष्ट्रीय उर्दू यूनिवर्सिटी जैसे संस्थानों ने मुसलमानों में शिक्षा के प्रसार में ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। इनका महत्व केवल इसलिए नहीं है कि यहां बड़ी संख्या में मुस्लिम छात्र पढ़ते हैं, बल्कि इसलिए भी है क्योंकि ये भारत की साझा संस्कृति और सेक्युलर परंपरा के प्रतीक हैं। इन संस्थानों में कुलपति या अन्य पदाधिकारियों की नियुक्ति किसी की धार्मिक पहचान या राजनीतिक वफादारी के बजाय उसकी योग्यता, अनुभव और प्रशासनिक क्षमता के आधार पर होनी चाहिए। किसी व्यक्ति का भाजपा या आरएसएस से जुड़ा होना उसकी अयोग्यता का प्रमाण नहीं है, लेकिन यदि नियुक्ति का आधार केवल वैचारिक प्रतिबद्धता हो तो यह निश्चित रूप से चिंता का विषय है। लखनऊ यूनिवर्सिटी की पूर्व कुलपति प्रो. रूपरेखा वर्मा ने भी कुछ वर्ष पहले यह चेतावनी दी थी कि यदि नियुक्तियों में पात्रता के बजाय वैचारिक प्रतिबद्धता को प्राथमिकता दी जाएगी तो इससे शैक्षणिक वातावरण को गहरा नुकसान पहुंचेगा। यह चेतावनी देश के हर शिक्षण संस्थान पर लागू होती है।

समाचारपत्र के अनुसार विश्वविद्यालयों का काम किसी राजनीतिक दल के लिए प्रतिबद्ध कार्यकर्ता तैयार करना नहीं, बल्कि ऐसे जागरूक नागरिक गढ़ना है जो नीतियों का विश्लेषण कर सके और सही-गलत में अंतर कर सके। यदि शिक्षकों और छात्रों को यह लगने लगे कि उनका भविष्य शैक्षणिक योग्यता के बजाय राजनीतिक वफादारी पर निर्भर है तो स्वतंत्र चिंतन कमजोर पड़ने लगता है। मुस्लिम समाज के शैक्षणिक और आर्थिक पिछड़ेपन का समाधान राजनीतिक सरपरस्ती में नहीं, बल्कि संस्थानों की सुविधाएं बढ़ाने, शोध को प्रोत्साहन देने और गरीब छात्रों को बेहतर अवसर प्रदान करने में है। सरकार को ऐसे कदम उठाने चाहिए जिनसे छात्रों का भविष्य संवरे, न कि उन्हें चुनावी हितों से जोड़कर देखा जाए।

संपादकीय ने स्पष्ट किया है कि मुसलमानों को किसी राजनीतिक दल से संवाद करने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए, बशर्ते इससे उनकी समस्याओं का समाधान हो और शिक्षण संस्थानों की स्वायत्तता से कोई समझौता न हो। असली सवाल यह नहीं है कि आरएसएस मुसलमानों से संपर्क क्यों बढ़ा रहा है, क्योंकि लोकतांत्रिक राजनीति में यह उसका अधिकार है। मुख्य सवाल

यह है कि इस संपर्क का उद्देश्य क्या है? यदि इसका उद्देश्य समाज को मुख्यधारा में समान अवसर देना है तो इसका स्वागत है, लेकिन यदि इसके जरिए विश्वविद्यालयों पर कोई विशेष विचारधारा थोपने की कोशिश हो रही है तो उस पर सवाल उठना बेहद जरूरी है।

फारूक अब्दुल्ला के पाकिस्तान–परस्त बयान पर बवाल



औरंगाबाद टाइम्स (26 अक्टूबर) के अनुसार पाकिस्तान द्वारा अंतरराष्ट्रीय मंचों पर निरंतर जम्मू-कश्मीर का मुद्दा उठाए जाने के बीच नेशनल कांफ्रेंस के अध्यक्ष और पूर्व मुख्यमंत्री फारूक अब्दुल्ला ने एक विवादित बयान देकर सियासी माहौल फिर से गरमा दिया है। बारामूला में एक जनसभा को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि पाकिस्तान विभिन्न वैश्विक मंचों पर आज भी कश्मीरियों और उनके अधिकारों की बात उठा रहा है। अब्दुल्ला ने दावा किया कि इसी अंतरराष्ट्रीय दबाव के कारण जम्मू-कश्मीर के लोग आज बचे हुए हैं, अन्यथा केंद्र सरकार के इरादे नेक नहीं हैं। उनके इस बयान पर भाजपा और विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) ने तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है।

जनसभा में लोगों को संबोधित करते हुए फारूक अब्दुल्ला ने सवाल किया कि "क्या कोई कश्मीरी नई दिल्ली से न्याय की उम्मीद कर सकता है? आज दिल्ली दुनिया की दबाव के वजह से खामोश है। हमारे पड़ोसी देश ने दुनिया भर में यह मुद्दा जीवित रखा है कि कश्मीर समस्या अभी हल नहीं हुई है और इसी के बूते हमारी रक्षा हो रही है।" उन्होंने लोगों से अपने अधिकारों और सम्मान के लिए आवाज बुलंद करने की अपील करते हुए चेतावनी दी कि यदि वे लड़ने का जज्बा नहीं रखेंगे तो उनका नामोनिशान और अलग पहचान मिट जाएगी।

अब्दुल्ला ने केंद्र की भाजपा सरकार पर हमला बोलते हुए आरोप लगाया कि उसके सत्ता में आने के बाद से देश में मुसलमानों का जीना दूभर हो गया है और उन्हें लगातार उत्पीड़न का शिकार बनाया जा रहा है। उन्होंने कहा कि "हमारी मस्जिदों और दरगाहों को निशाना बनाया जा रहा है तथा मकानों व दुकानों को बुलडोजरों से ध्वस्त किया जा रहा है। हर व्यक्ति जानता है कि जिंदगी और मौत अल्लाह के हाथ में है, जिसे कोई बदल नहीं सकता।"

फारूक अब्दुल्ला ने आगे कहा कि कश्मीरियों ने देश के साथ आगे बढ़ने के लिए कई बलिदान दिए हैं, लेकिन वे सत्तारूढ़ दल से



अपने फैसलों पर पुनर्विचार करने का अनुरोध करते हैं। उन्होंने जम्मू कश्मीर के उपराज्यपाल मनोज सिन्हा पर भी निशाना साधते हुए आरोप लगाया कि वे केंद्र सरकार की कठपुतली बने हुए हैं, कश्मीरियों के मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है और उनकी संस्कृति व पहचान खतरे में हैं।

समाचारपत्र के अनुसार जम्मू-कश्मीर के पूर्व मुख्यमंत्री और पूर्व केंद्रीय मंत्री गुलाम नबी आजाद ने फारूक अब्दुल्ला के बयान पर कड़ी प्रतिक्रिया देते हुए कहा है कि "मुझे अब्दुल्ला का यह बयान सुनकर बड़ी हैरानी हुई है। वे कई बार केंद्र में मंत्री और राज्य के मुख्यमंत्री रह चुके हैं, इसलिए मुझे उनसे इस तरह के बयान की उम्मीद नहीं थी। मैं उनके इस दावे से पूरी तरह असहमत हूं कि पाकिस्तान हमारा रक्षक है। हकीकत यह है कि पाकिस्तान हमारा रक्षक नहीं, बल्कि हमारी तबाही का कारण है।" आजाद ने आगे कहा कि पाकिस्तान कभी भी अंतरराष्ट्रीय मंचों पर जम्मू-कश्मीर के लोगों के लिए रोजगार या व्यापार की बात नहीं करता। उन्होंने चेतावनी देते हुए कहा कि "यदि हम पाकिस्तान के साथ होते तो हमारा भी वैसा ही हाल होता जैसा आज पाकिस्तान अधिक्रांत जम्मू-कश्मीर (पीओजेके) के निवासियों का हो रहा है। वहां बढ़ती महंगाई और गुलामी के खिलाफ अपने अधिकारों की रक्षा के लिए लोगों ने 'ज्वाइंट अवामी एक्शन कमेटी' बनाई थी, जिस पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। पीओजेके में स्थानीय कश्मीरियों का कोई वजूद नहीं बचा है और वह क्षेत्र बाहरी पुलिस व सैनिकों की छावनी बनकर रह गया है।

गुलाम नबी आजाद ने आरोप लगाया कि पीओजेके में कश्मीरियों के अधिकारों को कुचलने के लिए प्रशासन की कमान सेना ने संभाल रखी है और वहां के शासकों ने लोगों की अंधाधुंध गिरफ्तारी का सिलसिला शुरू कर रखा है। उन्होंने कहा कि "सच्चाई यह है कि पीओजेके के लोग पाकिस्तान से मुक्त होकर हमारे साथ शामिल होने के लिए अपनी जान जोखिम में डाल रहे हैं। ऐसे हालात में अगर कोई यह कहता है कि पाकिस्तान हमारा रक्षक है तो वह सरासर गलत है और जानबूझकर सच्चाई पर पर्दा डाल रहा है। पाकिस्तान हमारा दुश्मन था, दुश्मन है और हमेशा जम्मू-कश्मीर की जनता का दुश्मन बना रहेगा।"

कौमी तंजीम (25 अक्टूबर) के अनुसार भाजपा के वरिष्ठ नेता रविन्द्र रैना ने फारूक अब्दुल्ला के बयान की कड़ी आलोचना करते हुए कहा है कि ऐसा बयान भारत का दुश्मन ही दे सकता है और यह देश के साथ खुली गद्दारी है। उन्होंने इस बयान को घोर निंदनीय बताते हुए कहा कि "हकीकत यह है कि पाकिस्तान कश्मीरियों का हत्यारा है, जिसने पिछले 35 सालों से आतंकवाद फैलाकर कश्मीर को कब्रिस्तान बना रखा है और मासूम लोगों को मौत के घाट उतार रहा है। पाकिस्तान हमारा कतई रक्षक नहीं है, बल्कि हमारे सैनिक ही हमारे असली रक्षक हैं।"

वहीं, भाजपा के राष्ट्रीय प्रवक्ता आर.पी. सिंह ने भी फारूक अब्दुल्ला के बयान पर रोष

व्यक्त करते हुए कहा कि वे पाकिस्तान को अपना रक्षक बताकर उसकी ओर आशा भरी नजरों से देख रहे हैं। उन्होंने कहा कि "अब्दुल्ला को पीओजेके के हालात और अपने कश्मीर की तुलना करनी चाहिए। क्या उन्हें दोनों में कोई फर्क नजर नहीं आता? अनुच्छेद 370 हटने के बाद आज कश्मीर में तेजी से विकास हो रहा है। यही कारण है कि हर साल लाखों भारतीय पर्यटक कश्मीर जाते हैं और वहां की आर्थिक समृद्धि में योगदान देते हैं।"



मुंबई उर्दू न्यूज (30 अक्टूबर) के अनुसार नेशनल कांफ्रेंस के अध्यक्ष फारूक अब्दुल्ला ने कश्मीर से अनुच्छेद 370 को निरस्त करने के फैसले को बरकरार रखने वाले सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को गैर-कानूनी और असंवैधानिक बताया है। उन्होंने आरोप लगाया कि इस फैसले में संविधान की धज्जियां उड़ाई गई हैं और जम्मू-कश्मीर को पूर्ण राज्य का दर्जा देने में जानबूझकर देरी की जा रही है। अब्दुल्ला ने कहा कि "केंद्र सरकार ने हमारी रियासत को खंडित कर कई टुकड़ों में बांट दिया है। भाजपा ने जम्मू-कश्मीर की जनता से किए अपने वादे पूरे नहीं किए और नई दिल्ली ने हमेशा हमारे साथ सौतेला व्यवहार किया है।"

इंकलाब (4 नवंबर) के अनुसार श्रीनगर से नेशनल कांफ्रेंस के लोकसभा सांसद आगा सैयद रुहुल्लाह मेहदी ने लोकसभा की सदस्यता और पार्टी दोनों से इस्तीफा दे दिया है। पार्टी के साथ अपने 24 वर्षों के संबंधों का जिक्र करते हुए उन्होंने आरोप लगाया कि उमर अब्दुल्ला और फारूक अब्दुल्ला ने कश्मीरी जनता से किए अपने वादे पूरे नहीं किए। उन्होंने कहा कि इन नेताओं ने अनुच्छेद 370 की बहाली, सभी राजनीतिक कैदियों की रिहाई और जम्मू-कश्मीर के संवैधानिक अधिकारों को वापस दिलाने का आश्वासन दिया था, लेकिन इनमें से कोई भी वादा पूरा नहीं किया गया। इस संबंध में उन्होंने लोकसभा अध्यक्ष को पत्र भेजकर अपना इस्तीफा तत्काल स्वीकार करने का अनुरोध किया है। जानकार सूत्रों के अनुसार हाल ही में मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला द्वारा अपने मंत्रिमंडल का विस्तार करके चार नए मंत्रियों को शामिल किए जाने के बाद नेशनल कांफ्रेंस में आंतरिक विद्रोह की स्थिति पैदा हो गई है। असंतुष्ट विधायकों के एक गुट ने इस फैसले पर नाराजगी जताते हुए सरकार से समर्थन वापस लेने की चेतावनी भी दी है।

संघ प्रमुख के उद्‌बोधन की आलोचना

एतेमाद (24 अक्टूबर) के अनुसार नेशनल कांफ्रेंस के अध्यक्ष फारूक अब्दुल्ला ने दिल्ली में होने वाले प्रदर्शनों के पीछे विदेशी हाथ होने संबंधी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक मोहन भागवत के बयान की आलोचना की है। जम्मू में मीडिया से बातचीत करते हुए अब्दुल्ला ने कहा कि जब भी केंद्र सरकार किसी संकट में फंसती है तो वह विदेशी साजिश का राग अलापने

लगती है। उन्होंने कहा कि मोहन भागवत और केंद्र सरकार उस देश का नाम सार्वजनिक करें, जो भारत के आंतरिक मामले में हस्तक्षेप कर देश में अशांति और अस्थिरता फैलाने का काम कर रहा है। फारूक अब्दुल्ला ने कहा कि "सरकार को दूसरों पर आरोप लगाने के बजाय सबसे पहले आत्मनिरीक्षण करना चाहिए और अपनी गलत नीतियों व कोताहियों पर ध्यान देना चाहिए। महज विदेशी हाथ होने का दावा करके अपनी प्रशासनिक विफलताओं पर पर्दा नहीं डाला जा सकता।



समाचारपत्र ने इसी अंक के अपने संपादकीय में संघ प्रमुख मोहन भागवत के उस बयान की चर्चा की है, जिसमें उन्होंने देश में हो रहे विरोध प्रदर्शनों के पीछे विदेशी हाथ होने की बात कही थी। संपादकीय के अनुसार यह शासकों द्वारा अपनी नीतिगत विफलताओं को छिपाने का एक पुराना हथकंडा है। मोहन भागवत ने अपने विजयादशमी उद्‌बोधन में कहा कि भारत की बढ़ती ताकत से दुनिया के कई देश परेशान हैं और वे साजिशों के जरिए यहां का माहौल खराब करने का प्रयास कर रहे हैं। समाचारपत्र ने लिखा है कि यह बयान कोई नया नहीं है। देश का इतिहास गवाह है कि जब भी सरकारें बढ़ती महंगाई और बेरोजगारी जैसी जनसमस्याओं पर नियंत्रण पाने में विफल रहती हैं तो वे बिना किसी झिझक के विदेशी साजिश का सहारा लेती हैं।

समाचारपत्र ने कहा है कि आपातकाल के दौरान जयप्रकाश नारायण के आंदोलन को अमेरिकी एजेंसी 'सीआईए' द्वारा संचालित बताने की जो परंपरा तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने शुरू की थी, वह आज भी जारी है। अंतर केवल इतना है कि जो आरएसएस और जनसंघ कल तक जयप्रकाश नारायण के साथ खड़े होकर इस आरोप का विरोध कर रहे थे, आज एनडीए के 12 वर्षों के शासन के बाद उन्हीं संगठनों को हर विरोध और असहमति के पीछे विदेशी साजिश नजर आने लगी है।

जून और जुलाई के विरोध प्रदर्शनों के बाद देश में 'जेन-जी' का नाम हर किसी की जुबान पर था। उस समय संघ प्रमुख मोहन भागवत ने मुंबई में युवाओं के एक कार्यक्रम में हिस्सा लिया था, जहां उन्होंने कहा था कि यह नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी से अधिक देशभक्त है। हालांकि, महज दो महीने बाद ही वे युवाओं के इस आंदोलन को विदेशी ताकतों की साजिश करार देने लगे हैं। यहां एक बड़ा विरोधाभास नजर आता है। एक ओर सरकार दावा करती है कि हमारा देश 'विश्वगुरु' बन चुका है, आर्थिक जगत में भारत का स्थान पांचवां हो गया है और दुनिया में हमारे प्रधानमंत्री की इच्छा के बिना एक पत्ता तक नहीं हिलता। दूसरी ओर यह कहा जा रहा है कि कुछ विदेशी ताकतें आंदोलनों को भड़काकर देश के ढांचे को हिला रही हैं। यदि देश वास्तव में इतना ताकतवर और आर्थिक रूप से मजबूत हो चुका है तो फिर इन छोटे-मोटे आंदोलनों से कैसे हिल सकता है?



सरकार के इन दावों की हकीकत इस बात से भी खुल जाती है कि देश की एक बड़ी आबादी यानी 80 करोड़ लोग आज भी सरकार की ओर से दिए जाने वाले 5 किलो मुफ्त अनाज पर निर्भर रहने को मजबूर हैं। स्वास्थ्य व शिक्षा के क्षेत्र में हमारे देश की गणना विश्व के निचले पायदान के देशों में होती है और विदेशी व्यापार के लिए हम चीन पर निर्भर हैं। ऐसे में यह मानना कठिन है कि देश ने कोई ऐसा क्रांतिकारी आर्थिक विकास कर लिया है, जिससे दुनिया की ताकतें भयभीत हो गई हैं।

हमारा समाज (22 अक्टूबर) ने लिखा है कि विजयादशमी के अवसर पर नागपुर से संघ प्रमुख मोहन भागवत ने राष्ट्रीय एकता, धार्मिक और सांस्कृतिक बहुलता का सम्मान करने का संदेश दिया, लेकिन इसी भाषण में देश में हो रहे आंदोलनों को विदेशी साजिश और सत्ता परिवर्तन के प्रयासों से जोड़कर एक नया विवाद खड़ा कर दिया है। समाचारपत्र ने सवाल उठाया है कि क्या राष्ट्रीय एकता का अर्थ सरकार का विरोध न करना है और क्या बहुधार्मिकता का सम्मान केवल भाषणों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए? मोहन भागवत कहते हैं कि भारत की विभिन्न धार्मिक, भाषाई और सांस्कृतिक पहचानों को स्वीकार करना हमारी परंपरा है, लेकिन यह सुंदर सिद्धांत केवल शब्दों में नहीं, बल्कि ठोस कार्रवाइयों में दिखना चाहिए।

समाचारपत्र ने आरोप लगाया है कि जब से भाजपा सत्ता में आई है, उसने चुनावी रणनीति के तहत बार-बार धार्मिक पहचान के मुद्दे को उछाला है। मुसलमानों को हर बार अपनी राष्ट्रभक्ति को साबित करने के लिए मजबूर किया जा रहा है, जबकि सांप्रदायिक उत्तेजना फैलाने वाली गतिविधियों पर कोई ठोस कार्रवाई करने के बजाय मौन साध लिया जाता है। ऐसे में मोहन भागवत के दावे खोखले नजर आते हैं। आरएसएस खुद को एक सांस्कृतिक संगठन बताता है, लेकिन भाजपा के साथ उसके राजनीतिक रिश्ते किसी से छिपे नहीं हैं। यदि दोनों का उद्देश्य समाज में समरसता लाना है तो फिर देश में विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच वैमनस्य क्यों बढ़ता जा रहा है?

समाचारपत्र के अनुसार मोहन भागवत सामाजिक सद्भावना बनाए रखने की बात करते हैं, लेकिन धार्मिक स्थलों पर चलते बुलडोजर, खान-पान और पहनावे को लेकर खड़े किए जाने वाले विवाद आरएसएस और भाजपा की कथनी व करनी के अंतर को उजागर करते हैं। मुसलमानों को संदेह की नजर से देखने, हर समस्या को धार्मिक रंग देने और बहुसंख्यक समाज की

भावनाओं को भड़काकर राजनीतिक स्वार्थ साधने से सामाजिक एकता मजबूत नहीं हो सकती। यदि पुराने जख्म भरने हैं तो आज दिए जा रहे जख्मों का सिलसिला भी रोकना होगा।



अवधनामा (28 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि 'वोट चोरी' और 'जेन-जी' के आंदोलनों ने न केवल सरकार, बल्कि संघ परिवार में भी हलचल पैदा कर दी है। संपादकीय के अनुसार सड़क पर उतरते जनसैलाब से सरकार और भाजपा को हालात नियंत्रण से बाहर होते दिख रहे हैं, इसलिए संघ प्रमुख मोहन भागवत ने दशहरे के भाषण में इन आंदोलनों के पीछे विदेशी ताकतों की आड़ लेकर इन्हें कमजोर करने की कोशिश की है। समाचारपत्र ने आरोप लगाया है कि दरअसल मोहन भागवत को चुनाव व्यवस्था में सुधार से सत्ता हाथ से निकल जाने का डर सता रहा है।

उत्तर प्रदेश में यूसीसी लागू करने का आश्वासन



सहाफत (31 अक्टूबर) के अनुसार केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने घोषणा की है कि यदि उत्तर प्रदेश में भाजपा एक बार फिर से सत्ता में आती है तो राज्य में समान नागरिक संहिता (यूसीसी) लागू की जाएगी। उन्होंने कहा कि देश के कई राज्यों में यूसीसी लागू की जा चुकी है और पार्टी ने अपने चुनावी घोषणा पत्र में जनता से किए गए प्रमुख वादे- जैसे जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद 370 हटाना और अयोध्या में राम मंदिर का निर्माण पूरे किए हैं।

गृह मंत्री की इस घोषणा पर टिप्पणी करते हुए समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष और पूर्व मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने तंज कसते हुए कहा कि 'बड़ी देर कर दी मेहरबां आते-आते'। वहीं,



कांग्रेस महासचिव जयराम रमेश ने आरोप लगाया कि मोदी सरकार समाज में विभाजन पैदा करने और बहुसंख्यक वर्ग को अल्पसंख्यकों के खिलाफ भड़काने के लिए ऐसे हथकंडे अपना रही है।

औरंगाबाद टाइम्स (19 अक्टूबर) के अनुसार महाराष्ट्र में भी यूसीसी लागू करने से संबंधित तैयारियां तेज हो गई हैं। केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने एनडीए शासित सभी राज्यों में यूसीसी लागू करने की अंतिम समय-सीमा 2029 तय की है। महाराष्ट्र में यूसीसी से संबंधित प्रारूप बनाने के लिए गठित समिति ने आम नागरिकों से सुझाव मांगे हैं। इस संबंध में लॉन्च की गई वेबसाइट पर 19 प्रश्न पूछे गए हैं, जिनमें विवाह, तलाक, उत्तराधिकार और विरासत जैसे विषय शामिल हैं। प्रश्नावली में बहुपत्नी प्रथा, लिव-इन रिलेशनशिप और हलाला प्रथा के संदर्भ में भी जनता से राय मांगी गई है।

गौरतलब है कि इस वर्ष गुजरात, असम और मध्य प्रदेश की विधानसभाओं द्वारा यूसीसी लागू करने के प्रस्ताव पारित किए जा चुके हैं। छत्तीसगढ़ और राजस्थान में भी इसका प्रारूप तैयार करने के लिए समितियां गठित की गई हैं। महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री देवेन्द्र फडणवीस ने घोषणा की है कि दिसंबर में शुरू होने वाले विधानसभा सत्र में यूसीसी विधेयक का प्रारूप पेश कर दिया जाएगा।

उर्दू टाइम्स (25 अक्टूबर) के अनुसार जमीयत उलेमा महाराष्ट्र ने यूसीसी लागू करने के लिए बनाई गई समिति का विरोध करते हुए कहा है कि समिति द्वारा पूछे गए कई प्रश्न इस्लामिक शरिया के विरुद्ध हैं, इसलिए संगठन इसका विरोध करेगा।

उर्दू टाइम्स (30 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि मुसलमानों की यह आदत बन चुकी है कि वे सांप निकल जाने के बाद लाठी पीटते हैं और पहले से ऐसा कोई प्रयास नहीं करते जिससे यह नौबत ही न आए। संपादकीय के अनुसार अब समय आ गया है कि मुस्लिम समाज सरकार द्वारा गठित यूसीसी समिति की प्रश्नावली का पूरी शक्ति से जवाब दे। इसके लिए ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड द्वारा तैयार किए गए क्यूआर कोड का अधिक से अधिक लाभ उठाया जाना चाहिए। बोर्ड को चाहिए कि वह हर मुस्लिम बहुल क्षेत्र में ऐसे युवाओं को नियुक्त करे, जो कंप्यूटर या लैपटॉप के माध्यम से ये फॉर्म निकालकर भरने में लोगों की मदद करे।

समाचारपत्र ने आगाह किया है कि यदि समय रहते यह प्रयास नहीं किया गया तो जब तक समाज कुंभकर्णी नींद से जागेगा तब तक शरिया पर आंच आ चुकी होगी और बाद में केवल जलसे-जुलूस व धरने-प्रदर्शन करने से कोई लाभ नहीं होगा।

महाराष्ट्र के धर्मांतरण कानून को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती



औरंगाबाद टाइम्स (17 अक्टूबर) के अनुसार नागरिक अधिकार संगठन 'एसोसिएशन फॉर प्रोटेक्शन ऑफ सिविल राइट्स' ने महाराष्ट्र में बनाए गए नए धर्मांतरण विरोधी कानून की संवैधानिक वैधता को चुनौती देते हुए सर्वोच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर की है। संगठन के सचिव शाकिर शेख के माध्यम से दायर इस याचिका में कानून की विभिन्न धाराओं पर आपत्ति जताते हुए मौलिक अधिकारों के संदर्भ में इस पर पुनर्विचार करने का अनुरोध किया गया है। याचिका में कहा गया है कि इस कानून के प्रावधान संविधान में प्रदत्त धार्मिक स्वतंत्रता की अवधारणा, सभी धर्मों के प्रचार-प्रसार के अधिकार, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और कानून के समक्ष समता के मूलभूत अधिकारों के विरुद्ध हैं। यदि कोई व्यक्ति अपनी मर्जी से धर्मांतरण करता है तो संवैधानिक दृष्टि से राज्य को उसमें हस्तक्षेप करने या कानूनी प्रतिबंध लगाने का कोई अधिकार नहीं है। संगठन ने स्पष्ट किया है कि इस याचिका का उद्देश्य संविधान द्वारा सभी नागरिकों को दिए गए अधिकारों की रक्षा करना है।

मुंबई उर्दू न्यूज (28 अक्टूबर) के अनुसार छत्तीसगढ़ विधानसभा द्वारा पारित धर्मांतरण विरोधी कानून की संवैधानिक वैधता को भी सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गई है। इस याचिका पर सुनवाई करते हुए अदालत ने केंद्र सरकार और छत्तीसगढ़ सरकार को नोटिस जारी किया है। मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति सूर्यकांत की पीठ ने निर्देश दिया कि इस मामले को भी उसी पीठ के समक्ष भेजा जाए, जो उत्तर प्रदेश और राजस्थान सरकारों द्वारा पारित धर्मांतरण विरोधी कानूनों से जुड़ी याचिकाओं पर विचार कर रही है। यह याचिका 'ईसाई आदिवासी महासभा' द्वारा दायर की गई है।

विश्व

मालदीव में पाकिस्तान का बढ़ता दखल



हिंदुस्तान एक्सप्रेस (23 अक्टूबर) के अनुसार पाकिस्तान के सेना प्रमुख जनरल आसिम मुनीर ने इस्लामाबाद में मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू से मुलाकात की। सरकारी प्रवक्ता के अनुसार इस बैठक में दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय रक्षा सहयोग बढ़ाने और आपसी संबंधों को मजबूत करने पर विस्तृत चर्चा हुई। साथ ही, मालदीव के सामने उभरते बाहरी खतरों और क्षेत्रीय सुरक्षा चुनौतियों पर भी विस्तार से बातचीत की गई।

राष्ट्रपति मुइज्जू के इस पाकिस्तान दौरे के दौरान दोनों देशों के बीच स्वास्थ्य, शिक्षा, व्यापार, रक्षा और समुद्री सुरक्षा समेत 20 समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। पाकिस्तानी टीवी चैनल 'दुनिया न्यूज' की रिपोर्ट के मुताबिक इस विशेष मुलाकात में यह तय किया गया है कि पाकिस्तान और मालदीव के बीच सैन्य संबंधों को और मजबूत किया जाएगा। पाकिस्तान ने सैन्य बुनियादी ढांचे और रक्षा से जुड़ी विभिन्न परियोजनाओं की स्थापना के साथ-साथ रक्षा सामग्री के उत्पादन में भी मालदीव को पूरा सहयोग देने का आश्वासन दिया है।

इस रणनीतिक बातचीत के दौरान राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू ने यह आशा व्यक्त की कि मालदीव की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए उसकी सुरक्षा सुनिश्चित करने और सुरक्षा चुनौतियों से निपटने में पाकिस्तान उनके देश को पूरा सहयोग देगा। उन्होंने पाकिस्तान द्वारा दिए गए आश्वासन के प्रति संतोष व्यक्त किया और उम्मीद जताई कि दोनों देश रक्षा सहयोग के मामले में एक नए अध्याय की शुरुआत करेंगे। बैठक में मुइज्जू ने पाकिस्तान की सशस्त्र सेनाओं की बढ़ती कार्यक्षमता की प्रशंसा की और कहा कि इस क्षेत्र में सुरक्षा व स्थिरता को बढ़ावा देने में पाकिस्तान की भूमिका सराहनीय रही है।

उल्लेखनीय है कि पिछले 11 वर्षों में मालदीव के किसी राष्ट्रपति का यह पहला पाकिस्तान दौरा है। अपनी इस यात्रा के दौरान मालदीव के राष्ट्रपति ने पाकिस्तानी राष्ट्रपति आसिफ अली जरदारी और प्रधानमंत्री शहबाज शरीफ से भी मुलाकात की।

गौरतलब है कि पाकिस्तान और मालदीव के बीच कूटनीतिक संबंधों की शुरुआत वर्ष 1966 में हुई थी। ये दोनों देश इस्लामिक सहयोग संगठन (ओआईसी) और दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) के सदस्य हैं। मालदीव की 95 प्रतिशत से अधिक आबादी सुन्नी मुसलमानों की



है, जिसके कारण पाकिस्तान शुरुआत से ही वहां पर मुस्लिम उलेमाओं को भेजकर और छात्रों को पाकिस्तानी मदरसों में धार्मिक शिक्षा के लिए छात्रवृत्तियां देकर अपनी पैठ बनाने की कोशिश करता रहा है। हालांकि, भारत सरकार की सतर्कता और रणनीतिक पकड़ के कारण पाकिस्तान को पहले इसमें विशेष सफलता नहीं मिली थी।

मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू ने वर्ष 2023 के चुनाव में 'इंडिया आउट' को अपना मुख्य मुद्दा बनाया था। सत्ता संभालते ही उन्होंने मालदीव की पारंपरिक विदेश नीति को बदलते हुए भारत के बजाय सबसे पहले चीन की आधिकारिक यात्रा की थी। भारतीय विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता रणधीर जायसवाल ने इस पर बयान देते हुए कहा है कि भारत मालदीव और पाकिस्तान के बीच हुए नए समझौतों पर करीब से नजर रख रहा है। उल्लेखनीय है कि भारत ने हमेशा मालदीव के साथ अपने मधुर संबंधों को प्राथमिकता दी है और मुइज्जू सरकार के आने के बाद भी उसे आर्थिक व वित्तीय सहायता देना लगातार जारी रखा है।

वित्त वर्ष 2025-26 में भारत ने मालदीव को 625 करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता दी थी, जबकि 2026-27 के बजट में इसके लिए 550 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। इसके अतिरिक्त अक्टूबर 2026 में भारत ने सार्क फ्रेमवर्क के तहत मालदीव के विदेशी मुद्रा भंडार को स्थिर रखने के लिए तीन हजार करोड़ रुपये की 'करेंसी स्वैप' सुविधा भी दी। साथ ही, भारत सरकार ने मालदीव को चावल, गेहूं का आटा, चीनी, दालें, प्याज और आलू जैसी आवश्यक वस्तुओं के निर्यात की विशेष अनुमति भी प्रदान की है। इसके बावजूद मालदीव के वर्तमान राष्ट्रपति के भारत विरोधी रुख में कोई खास बदलाव आता नहीं दिख रहा है।

मुइज्जु के हालिया पाकिस्तान दौरे का एक महत्वपूर्ण रणनीतिक और आर्थिक पहलू भी सामने आया है। इसके तहत दोनों देशों ने अगले दो वर्षों में आपसी व्यापार को 13 मिलियन डॉलर से बढ़ाकर 200 मिलियन डॉलर करने का लक्ष्य रखा है। मालदीव अब तक व्यापार के लिए मुख्य रूप से भारत पर ही निर्भर रहा है, लेकिन यह पहला मौका है जब उसने पाकिस्तान और चीन के साथ अपने व्यावसायिक रिश्तों को बढ़ाने का इतना बड़ा प्रयास किया है। अब मालदीव में चीन के साथ-साथ पाकिस्तान भी सैन्य मामलों में सक्रिय रुचि ले रहा है।

पाकिस्तान ने मालदीव को चिकित्सा सुविधाओं के विकास में भी सहयोग देने का भरोसा दिया है। इलाज के मामले में मालदीव अब तक पूरी तरह भारत पर निर्भर रहा है, जहां भारत ने एक अस्पताल की स्थापना भी की थी और वहां के लोग इलाज के लिए भारत आते रहे हैं। जानकारों का मानना है कि मालदीव अब इस्लामिक कट्टरपंथ की ओर तेजी से बढ़ रहा है और हाल ही में पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी आईएसआई ने भी वहां अपनी सक्रियता बढ़ानी शुरू कर दी है।

औरंगाबाद टाइम्स (25 अक्टूबर) के अनुसार मालदीव के पूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद ने मुइज्जू के पाकिस्तान दौरे की तीखी आलोचना की है। उन्होंने आरोप लगाया कि मुइज्जू ने भारत



और पाकिस्तान के बीच लंबे समय से जारी तनाव को नजरअंदाज करके मालदीव को दोनों देशों के विवाद के बीच लाकर खड़ा कर दिया है। नशीद ने आगाह किया कि ऐसे हालात में छोटे देशों खासकर मालदीव के लिए जोखिम बहुत ज्यादा बढ़ जाते हैं, लेकिन राष्ट्रपति ने इन खतरों पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया।

मालदीव के पूर्व विदेश मंत्री अब्दुल्ला शाहिद ने भी वर्तमान सरकार की ढुलमुल विदेश नीति पर निशाना साधा है। उन्होंने कहा कि इस अदूरदर्शी नीति के कारण वैश्विक स्तर पर मालदीव का प्रभाव खत्म हो रहा है। शाहिद ने कहा कि भारत शुरुआत से ही मालदीव को निरंतर आर्थिक सहयोग देने वाला एकमात्र प्रमुख देश रहा है, लेकिन वर्तमान सरकार इस ऐतिहासिक मित्रता को नजरअंदाज करके देश की विदेश नीति को गलत दिशा में ले जा रही है, जो मालदीव के हित में नहीं है।

इंकलाब (31 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में कहा है कि मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू का पाकिस्तान दौरा इस बात का संकेत है कि दोनों देश मिलकर हिंद महासागर की सुरक्षा से जुड़ी एक नई रणनीति तैयार कर रहे हैं। इस्लामाबाद में हुए समझौतों और सार्क को पुनः सक्रिय करने की मालदीव की अपील को भारत के सुरक्षा हितों को कमजोर करने वाले कदम के रूप में देखा जा रहा है। हालांकि, भारत ने हमेशा संकट के समय मालदीव की मदद की है, लेकिन हाल ही में मालदीव और पाकिस्तान के बीच बढ़ी इस नजदीकी से भारत सरकार की चिंताएं बढ़ना स्वाभाविक है। कट्टर इस्लामिक नेता मुइज्जू ने पाकिस्तान के साथ मिलकर भारत विरोधी अभियान को पुनः मजबूत किया है। बदलते घटनाक्रम से यह साफ है कि पाकिस्तान अब मालदीव की सहायता से हिंद महासागर में एक नया मोर्चा खोलना चाहता है, जिसमें चीन पहले से शामिल है। चीन ने इससे पहले ग्वादर बंदरगाह के निर्माण में भी पाकिस्तान की सहायता की है और इसी उद्देश्य से वह ईरान के साथ भी अपने संबंधों को नए आयाम दे रहा है। मालदीव का हिंद महासागर की सुरक्षा में महत्वपूर्ण स्थान है, इसलिए पाकिस्तान के साथ उसके बढ़ते संबंध भारत के लिए सुरक्षा चुनौती पैदा कर सकते हैं।

वर्ष 2016 के बाद से आठ क्षेत्रीय देशों का संगठन सार्क अपनी शिखर बैठक आयोजित नहीं कर सका है, जिसकी पृष्ठभूमि से मालदीव के राष्ट्रपति भलीभांति परिचित थे, फिर भी उन्होंने इसे पुनर्जीवित करने पर जोर दिया। उल्लेखनीय है कि भारत सरकार इस बात पर अडिग है कि जब तक पाकिस्तान भारत विरोधी आतंकवादी गतिविधियों को पूरी तरह बंद नहीं करता तब तक सार्क को सक्रिय करने का कोई लाभ नहीं है। वर्ष 2016 में उरी में भारतीय सेना के ब्रिगेड मुख्यालय पर पाकिस्तान समर्थित आतंकवादियों के हमले के बाद भारत ने इस्लामाबाद में आयोजित होने वाले सार्क सम्मेलन का बहिष्कार किया था। इसके बाद अफगानिस्तान, भूटान, बांग्लादेश और नेपाल ने भी इस सम्मेलन में भाग लेने से इनकार कर दिया था। ऐसे में मालदीव की यह नई रणनीति निश्चित रूप से क्षेत्रीय सुरक्षा के मोर्चे पर भारत के लिए खतरा बढ़ाने वाली है।

पाकिस्तान के ग्वादर में सैन्य शिविर पर बलूच विद्रोहियों का हमला



कौमी भारत (21 अक्टूबर) के अनुसार बलूचिस्तान के विद्रोही गुटों ने दावा किया है कि उनके लड़ाकों ने ग्वादर में पाकिस्तानी सेना की छावनी पर हमला करने के बाद इस पूरे इलाके पर कब्जा कर लिया है। उनका दावा है कि इस कार्रवाई में पाकिस्तानी सेना के 80 से अधिक लोग मारे गए हैं और कई सैन्य वाहनों को नष्ट कर दिया गया है। दूसरी ओर, पाकिस्तानी सेना के जनसंपर्क विभाग (आईएसपीआर) ने ग्वादर छावनी पर हुए बलूच विद्रोहियों के हमलों की पुष्टि तो की है, लेकिन सैनिकों के मारे जाने की संख्या की पुष्टि नहीं की है। स्थिति पर काबू पाने के लिए रावलपिंडी, क्वेटा और कराची से अतिरिक्त सुरक्षा बल भेजे गए हैं।

उर्दू टाइम्स (25 अक्टूबर) के अनुसार बलूचिस्तान लिबरेशन फ्रंट (बीएलएफ) के प्रवक्ता मेजर ग्वाहराम बलोच ने एक प्रेस विज्ञप्ति में दावा किया है कि ग्वादर में विभिन्न बलूच संगठनों द्वारा पाकिस्तानी सेना के खिलाफ शुरू किया गया 'ऑपरेशन अल्मास' सफल रहा है। संगठन का दावा है कि इस ऑपरेशन के जरिए उन्होंने बलूचिस्तान क्षेत्र पर कब्जा जमाए बैठी पाकिस्तानी सेना के कई शिविरों और खुफिया कार्यालयों को निशाना बनाकर भारी नुकसान पहुंचाया है। संगठन ने कहा है कि पाकिस्तानी सेना के खिलाफ उनका सशस्त्र संघर्ष जारी रहेगा।

कौमी भारत (22 अक्टूबर) के अनुसार बलूचिस्तान नेशनल पार्टी के प्रमुख सरदार अख्तर मेंगल ने पाकिस्तान सरकार की नीतियों की तीखी आलोचना करते हुए कहा है कि पाकिस्तानी शासक बलूचिस्तान में सुरक्षा संकट को हल करने में पूरी तरह विफल रहे हैं। उन्होंने सरकार को चेतावनी देते हुए कहा कि आज बलूचिस्तान सुलग रहा है और वहां का युवा वर्ग विद्रोही बनने पर विवश हो गया है। उन्होंने इस बात पर नाराजगी जताई है कि संघीय सरकार ने बलूचिस्तान में बदतर हालातों को संभालने के बजाय खैबर पख्तूनख्वा में आपातकाल लागू करके वहां की प्रांतीय सरकार को बर्खास्त कर दिया है, जबकि सुरक्षा के लिहाज से सबसे ज्यादा स्थिति बलूचिस्तान में खराब है।

हमारा समाज (17 अक्टूबर) के अनुसार रखशान डिवीजन के कमिश्नर असद उल्लाह काकर का अज्ञात हथियारबंद लोगों द्वारा अपहरण कर लिया गया है। उनका अपहरण तब किया गया, जब वे क्वेटा से खारान जा रहे थे ताकि अपनी नई जिम्मेदारी का कार्यभार संभाल सकें।

लश्कर–ए–तैयबा के शीर्ष कमांडर चौधरी मोहम्मद सरवर की मौत



सहाफत (21 अक्टूबर) के अनुसार इस्लामिक आतंकवादी संगठन लश्कर-ए-तैयबा में हाफिज सईद के बाद दूसरे सबसे महत्वपूर्ण आतंकवादी चौधरी मोहम्मद सरवर उर्फ अबू हाशिम की लाहौर में रहस्यमयी परिस्थितियों में मौत हो गई है। सरकारी दावों के अनुसार उसकी मौत एक मस्जिद की सीढ़ियों से गिरने के कारण हुई है। पाकिस्तान सरकार ने सरवर की मौत की पुष्टि करते हुए कहा है कि इस संबंध में उच्च स्तरीय जांच करवाई जा रही है। अमेरिका ने उसे वैश्विक आतंकवादी घोषित किया था और उसकी गिरफ्तारी के लिए एक करोड़ डॉलर के इनाम की घोषणा कर रखी थी। बताया जाता है कि सरवर लश्कर-ए-तैयबा के आतंकवादी अभियानों की रूपरेखा तैयार करता था और इसके अतिरिक्त वह संगठन के वित्तीय मामलों का प्रभारी भी था।

भारतीय सुरक्षा एजेंसियों के अनुसार मोहम्मद सरवर ने 2008 के मुंबई आतंकवादी हमलों की साजिश रचने और इसके वित्तीय प्रबंधन में शामिल था। आधिकारिक सूत्रों के मुताबिक उसकी मौत लाहौर स्थित मरकज अल-कादसिया (लश्कर के मुख्यालय) में हुई है। उसकी मौत को पाकिस्तान के प्रमुख आतंकवादी संगठन लश्कर-ए-तैयबा के लिए एक बड़ा झटका माना जा रहा है।

गौरतलब है कि पिछले कुछ समय में पाकिस्तान के भीतर लश्कर-ए-तैयबा और हिजबुल मुजाहिदीन जैसे इस्लामिक आतंकवादी संगठनों से जुड़े एक दर्जन से अधिक आतंकवादियों की अज्ञात हमलावरों द्वारा हत्या की जा चुकी है, जिसके बाद से आतंकी नेटवर्क में भारी खौफ का माहौल है।

भ्रष्टाचार के आरोप में बांग्लादेश के पूर्व वायुसेना प्रमुख गिरफ्तार

उर्दू टाइम्स (20 अक्टूबर) के अनुसार भ्रष्टाचार के गंभीर आरोपों में बांग्लादेश के पूर्व वायुसेना प्रमुख एयर चीफ मार्शल शेख अब्दुल हन्नान को कतर में गिरफ्तार कर लिया गया है। उन्हें कतर सरकार ने बांग्लादेश सरकार के अनुरोध पर हिरासत में लिया है। बांग्लादेश के भ्रष्टाचार निरोधक आयोग के मुताबिक हन्नान पर अपनी घोषित आय से लगभग 3.28 करोड़ बांग्लादेशी टका की अवैध संपत्ति अर्जित करने का आरोप है। इसके अतिरिक्त उनके छह व्यक्तिगत बैंक खातों से लगभग 27.63 करोड़ टका के संदिग्ध लेन-देन का भी पता चला है।

भ्रष्टाचार निरोधक आयोग के उप-निदेशक मोहम्मद अख्तरुल इस्लाम ने बताया कि कतर पुलिस ने 15 अक्टूबर को पूर्व वायुसेना प्रमुख को हिरासत में लिया था। इंटरपोल ने जांच एजेंसी को एक ईमेल के जरिए इस गिरफ्तारी की जानकारी दी थी। आयोग ने पिछले साल जुलाई में हन्नान के खिलाफ भ्रष्टाचार और मनी लॉन्ड्रिंग कानूनों के तहत मुकदमा दर्ज करने की मंजूरी दी थी। हन्नान

की पत्नी भी इस मामले में आरोपी हैं। उन पर अपने पति की मदद से 1.91 करोड़ टका से अधिक की अघोषित संपत्ति जमा करने का आरोप है। उनके नाम पर दर्ज 32 बैंक खातों में 1.18 करोड़ टका के संदिग्ध लेन-देन का भी पता चला है।

जांच अधिकारियों के मुताबिक हन्नान की गैर-कानूनी संपत्ति कनाडा और दुबई में मिली है। इसके अतिरिक्त उनके बच्चों के नाम तीन अलग-अलग देशों में संपत्ति है। मार्च महीने में ढाका की एक अदालत ने भ्रष्टाचार निरोधक आयोग की अर्जी पर सुनवाई करते हुए हन्नान और उनकी पत्नी के आयकर दस्तावेज जब्त करने का निर्देश दिया था। आयोग का कहना है कि यात्रा प्रतिबंध और कई मुकदमे दर्ज होने के



बावजूद हन्नान देश से भागने में सफल रहे। वर्ष 1984 में पायलट के तौर पर वायुसेना में शामिल हुए हन्नान ने 12 जून 2021 को बांग्लादेश के वायुसेना प्रमुख का पद संभाला था और 11 जून 2024 को वे सेवानिवृत्त हो गए थे।

फ्रांस के मुस्लिम बहुल देश बनने की आशंका



उर्दू टाइम्स (21 अक्टूबर) के अनुसार अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने फ्रांस की आव्रजन नीति की तीखी आलोचना करते हुए दावा किया है कि पेरिस जल्द ही एक मुस्लिम बहुल शहर बन जाएगा। ट्रम्प ने फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों पर निशाना साधते हुए कहा कि उन्होंने सालों पहले मैक्रों को अपनी सीमाएं बंद करने की सलाह दी थी, लेकिन उन्होंने इसे अनसुना कर दिया, जिसके कारण आज फ्रांस सुरक्षा संकट का सामना कर रहा है।

गौरतलब है कि फ्रांस में महंगाई और शिक्षा व्यवस्था की बदहाली को लेकर पिछले कुछ सप्ताह से बड़े पैमाने पर हिंसक प्रदर्शन, आगजनी और लूटपाट की घटनाएं हो रही हैं। इस दौरान देश भर में अब तक 2500 से अधिक प्रदर्शनकारियों को गिरफ्तार किया गया है और



झड़पों में लगभग एक हजार सुरक्षाकर्मी घायल हुए हैं। कानून व्यवस्था बहाल करने के लिए प्रधानमंत्री सेबेस्टियन लेकोर्नू ने देश के विभिन्न संवेदनशील हिस्सों और पेरिस के इलाकों में कर्फ्यू लागू करने के निर्देश दिए हैं। दूसरी ओर, राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों ने यह स्वीकार किया है कि देश की खुफिया एजेंसियां सरकार को इन हिंसक प्रदर्शनों व दंगों की पूर्व सूचना देने में विफल रही हैं। हालांकि, उन्होंने अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रम्प के इस आरोप को गलत बताया कि इन हिंसक प्रदर्शनों के पीछे फ्रांस में रहने वाले मुसलमानों का हाथ है। सरकार इस बात का पता लगा रही है कि इन प्रदर्शनों के पीछे किसका हाथ है।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार फ्रांस में ईसाइयों के बाद मुसलमानों की संख्या सबसे अधिक है। फ्रांसीसी संस्थान इंस्टीट्यूट फॉर डेमोग्राफिक स्टडीज के 2019-2020 के सर्वेक्षण के मुताबिक 18 से 59 वर्ष की आयु के फ्रांसीसी नागरिकों में से 10 प्रतिशत मुस्लिम हैं। फ्रांस में रहने वाले मुसलमानों में बहुसंख्या सुन्नियों की है और उनका मूल संबंध मुख्य रूप से उत्तरी अफ्रीका और उप-सहारा क्षेत्रों से है, जो ऐतिहासिक रूप से कभी फ्रांस के उपनिवेश थे।

वर्ष 2024 की एक रिपोर्ट के अनुसार फ्रांस में रहने वाले 76 प्रतिशत मुसलमानों ने स्वीकार किया है कि उनके जीवन में धर्म (इस्लाम) बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दूसरी ओर, फ्रांस के समुद्र पार क्षेत्र मायोट में लगभग 97 प्रतिशत मुस्लिम आबादी है। वर्तमान अनुमानों के अनुसार फ्रांस में मुस्लिम आबादी 60 लाख से अधिक है। प्यू रिसर्च सेंटर के अनुमानों के अनुसार यदि आव्रजन और उच्च प्रजन्न दर की यह गति जारी रही तो वर्ष 2050 तक फ्रांस की कुल जनसंख्या में मुस्लिम आबादी का अनुपात 20 प्रतिशत तक पहुंचने की संभावना है। वहीं, अन्य यूरोपीय देशों जैसे- स्वीडन में 30.6 प्रतिशत, ऑस्ट्रिया में 19.9 प्रतिशत, जर्मनी में 19.7 प्रतिशत, बेल्जियम में 18. 2 प्रतिशत, ब्रिटेन में 17.2 प्रतिशत, नॉर्वे में 17 प्रतिशत, डेनमार्क में 16 प्रतिशत और नीदरलैंड में 15.2 प्रतिशत तक मुस्लिम आबादी पहुंच सकती है।

एतेमाद (2 नवंबर) के अनुसार फ्रांस के ल्योन शहर में हुए विरोध प्रदर्शनों के दौरान प्रदर्शनकारियों ने इजरायल और अमेरिका के राष्ट्रीय ध्वजों को आग के हवाले कर दिया। इस दौरान प्रदर्शनकारियों द्वारा इजरायल विरोधी नारे लगाए गए और कई लोगों ने फिलिस्तीन के समर्थन में भी नारेबाजी की।

उर्दू टाइम्स (23 अक्टूबर) के अनुसार फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों ने अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प और इजरायली प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू की परोक्ष रूप से आलोचना करते हुए आरोप लगाया कि कुछ विदेशी नेता फ्रांस में जारी अशांति का इस्तेमाल अपने राजनीतिक स्वार्थों और चुनावी अभियानों के लिए कर रहे हैं। गौरतलब है कि राष्ट्रपति ट्रम्प ने फ्रांस की हिंसा को प्रवासी मुसलमानों से जोड़ा था, जबकि प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू ने फ्रांस की सुरक्षा स्थिति पर चिंता व्यक्त करते हुए इसे कट्टरपंथी तत्वों का उभार बताया था।

पश्चिम एशिया

इजरायल के चुनावों में अरब दलों की सीटें बढ़ीं



इंकलाब (29 अक्टूबर) के अनुसार इजरायल में हुए संसदीय चुनावों में किसी भी गठबंधन को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला है, जिससे देश में नई सरकार के गठन और भविष्य की राजनीति को लेकर अनिश्चितता बढ़ गई है। इजरायल की 120 सदस्यीय संसद (नेसेट) में सरकार बनाने के लिए 61 सीटों की आवश्यकता होती है। हालांकि, वर्तमान प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू का दक्षिणपंथी गठबंधन और पूर्व सेना प्रमुख गादी आइजेनकोट के नेतृत्व वाला विपक्षी गठबंधन- दोनों ही इस बहुमत से दूर रह गए हैं। ताजा परिणामों में नेतन्याहू के गठबंधन को 53 और विपक्षी गठबंधन को 48 सीटें मिली हैं, जबकि अरब पार्टियों के खाते में कुल 19 सीटें गई हैं।

चट्टान (31 अक्टूबर) के अनुसार चुनाव में बहुमत से चुकने के बाद नेतन्याहू की 'लिकुड' पार्टी और उनके सहयोगी दलों ने गंभीर आरोप लगाए हैं। उनका दावा है कि नेतन्याहू को सत्ता से बेदखल करने के लिए अरब जगत के कई देशों ने इजरायल की अरब पार्टियों को भारी आर्थिक मदद पहुंचाई है। विशेष रूप से अरब पार्टी 'राम' पर कतर से बड़ी धनराशि लेकर वोट खरीदने का आरोप लगाया है। लिकुड पार्टी ने इस पूरे घटनाक्रम को एक राजनीतिक भूकंप बताते हुए दावा किया है कि "अरबों ने इजरायल के चुनाव को चुरा लिया है।" दूसरी ओर, 'राम' पार्टी के प्रमुख मंसूर अब्बास ने इन सभी आरोपों को सिरे से खारिज करते हुए कहा है कि उनका इस मामले से कोई लेना-देना नहीं है और वे किसी भी निष्पक्ष जांच का सामना करने के लिए तैयार हैं।

इस विवाद के बीच, केंद्रीय चुनाव समिति के अनुरोध पर इजरायल की आंतरिक सुरक्षा एजेंसी 'शिन बेट' ने विदेशी फंडिंग के आरोपों की जांच शुरू कर दी है। हालांकि, केंद्रीय चुनाव समिति के प्रमुख ने स्पष्ट किया है कि चुनाव में किसी बड़े पैमाने पर धांधली के ठोस प्रमाण नहीं मिले हैं और इस जांच से चुनाव के अंतिम नतीजों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

औरंगाबाद टाइम्स (30 अक्टूबर) के मुताबिक इस चुनाव में अरब पार्टी 'राम' के प्रदर्शन में उल्लेखनीय सुधार हुआ है और उसे



पिछली बार के मुकाबले तीन सीटें अधिक मिली हैं। पार्टी को पिछली बार पांच सीटें मिली थीं, जबकि इन चुनावों में आठ सीटें मिली हैं। उधर, कतर के विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता माजिद अल-अंसारी ने नेतन्याहू समर्थकों के आरोपों को बेबुनियाद, हास्यास्पद और खतरनाक करार दिया है। उन्होंने पलटवार करते हुए कहा कि नेतन्याहू अपनी राजनीतिक विफलता की खीझ कतर पर झूठे आरोप मढ़कर उतार रहे हैं।

एतेमाद (29 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में इजरायल के ताजा चुनाव परिणामों पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि किसी भी गठबंधन को स्पष्ट बहुमत न मिलने के कारण अब दोनों प्रमुख खेमे सरकार बनाने के लिए आवश्यक आंकड़ा जुटाने की कवायद में लग गए हैं। संपादकीय के अनुसार इन नतीजों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि इजरायली मतदाताओं ने प्रधानमंत्री नेतन्याहू की आक्रामक राजनीति को सिरे से नकार दिया है। हालांकि, यह भी एक कड़वा सच है कि फिलिस्तीनियों और अरबों के प्रति इजरायल के दोनों मुख्य गठबंधनों के दृष्टिकोण में कोई बुनियादी फर्क नहीं है। दोनों ही खेमों की नीति अरबों को अधिक से अधिक कमजोर रखने की है ताकि वे देश की यहूदी आबादी के लिए किसी प्रकार की चुनौती न बन सकें।

इजरायल के चुनावी इतिहास पर नजर डालें तो वहां आज तक किसी भी एक दल को अपने दम पर स्पष्ट बहुमत नहीं मिल पाया है, जिसके चलते हमेशा गठबंधन की सरकारें ही अस्तित्व में आती रही हैं। इजरायली कानून के तहत चुनाव संपन्न होने के बाद राष्ट्रपति विभिन्न राजनीतिक दलों से परामर्श कर उस नेता को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करते हैं, जिसके पास बहुमत साबित करने की सर्वाधिक संभावना होती है। मनोनीत नेता को सरकार के गठन के लिए 28 दिनों की समय-सीमा दी जाती है। यदि इस निर्धारित अवधि में वह बहुमत नहीं जुटा पाता है तो राष्ट्रपति के विवेक पर उसे अधिकतम 14 दिनों का अतिरिक्त समय मिल सकता है। यदि पहला उम्मीदवार सरकार बनाने में विफल रहता है तो राष्ट्रपति किसी अन्य नेता को यह अवसर सौंप सकते हैं। इसके बावजूद अगर गतिरोध बना रहता है तो संसद के पास 21 दिनों के भीतर किसी भी सांसद को प्रधानमंत्री पद के लिए नामित करने का अंतिम विकल्प होता है।

इस प्रक्रिया के भी विफल होने पर संसद भंग कर दी जाती है और देश में नए सिरे से चुनाव कराए जाते हैं। इसी जटिल संवैधानिक व्यवस्था के कारण इजरायल को 2019 से 2022 के बीच महज चार वर्षों में पांच बार आम चुनावों का सामना करना पड़ा था। अब यह देखना दिलचस्प होगा कि मौजूदा राजनीतिक रस्साकशी के बीच कौन सा गठबंधन सत्ता के शिखर तक पहुंचने में कामयाब होता है।

इंकलाब (29 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि इन चुनावों के नतीजों से यह स्पष्ट हो गया है कि सत्ता की चाबी अब अरब पार्टियों के हाथों में आ गई है और इजरायल में आबाद अरब समुदाय किसी भी दल को सत्ता के शिखर तक पहुंचा सकता है। इससे यह बिल्कुल साफ है कि इजरायल की अरब अल्पसंख्यक पार्टियां अब सरकार गठन में किंगमेकर की भूमिका निभा सकती हैं।

उल्लेखनीय है कि स्वयं को इस भूमि का मूल निवासी मानने वाले अरब मूल के इजरायली



नागरिक देश की कुल आबादी का पांचवां हिस्सा हैं। हाल ही में हुए चुनावों में अरब मुसलमानों ने एकजुट होकर बड़े पैमाने पर मतदान में भाग लिया। प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू ने शायद सपने में भी नहीं सोचा होगा कि इजरायल में जिन अरबों के राजनीतिक अस्तित्व को मिटाने की वे अब तक कोशिश करते रहे हैं, उन्हीं के हाथों में एक दिन देश की सत्ता की चाबी चली जाएगी। इजरायली अरब नेताओं का स्पष्ट कहना है कि वे नेतन्याहू के नेतृत्व वाली सरकार को किसी भी कीमत पर सत्ता में वापस नहीं आने देंगे, क्योंकि उनका रुख हमेशा से ही अरब विरोधी रहा है।

अवधनामा (30 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि इजरायल में त्रिशंकु संसद की स्थिति बनने के कारण ईरान के खिलाफ युद्ध की आग फिर से भड़कने का खतरा बढ़ गया है। संपादकीय के अनुसार ईरान ने जिस तरह अमेरिका के सामने झुकने से इनकार कर दिया है, उसे देखते हुए अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प इजरायल में किसी ऐसे नेतृत्व को सत्ता में लाने का प्रयास करेंगे, जो ईरान को घेरने और कमजोर करने की रणनीति में उनका पूरी तरह साथ दे सके।

हिंदुस्तान (29 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि प्रधानमंत्री नेतन्याहू ने शायद यह कल्पना भी नहीं की होगी कि इजरायली जनता उन्हें इस तरह नकार देगी। उन्हें यह उम्मीद थी कि इजरायल ने अमेरिका के सहयोग से जिस तरह हमास और हिजबुल्लाह की कमर तोड़ दी है, उसके चलते उन्हें मतदाताओं का जबर्दस्त समर्थन मिलेगा। हालांकि, यह भी स्पष्ट है कि नेतन्याहू के विपक्षी गठबंधन के लिए सत्तारूढ़ होने हेतु अरब पार्टियों का समर्थन लेना कठिन होगा, क्योंकि विपक्ष को भी प्रारंभ से ही इजरायल में रहने वाले अरबों का प्रमुख विरोधी माना जाता रहा है और उनके लिए अपनी पुरानी नीति में बदलाव करना आसान नहीं होगा।

इजरायल की राजनीति आगे कौन सा नया मोड़ लेगी, इसके बारे में अभी अनुमान लगाना संभव नहीं है। सरकार चाहे बेंजामिन नेतन्याहू की बने या गादी आइजेनकोट की, फिलिस्तीनियों को उनके उचित अधिकार मिलने, गाजा युद्ध के समाप्त होने और पश्चिम एशिया में स्थायी शांति की स्थापना की संभावना बहुत कम है। नेतृत्व में परिवर्तन सिर्फ चेहरों की तब्दीली मात्र होगी और इसका खामियाजा सिर्फ फिलिस्तीनियों को ही नहीं, बल्कि सभी अरब देशों को भुगतना पड़ेगा।

उर्दू टाइम्स (30 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि हाल के चुनावों के बाद इजरायल में मुसलमानों और अरब समुदाय का राजनीतिक दबदबा बढ़ गया है। अब किसी भी गठबंधन को सत्ता में आने के लिए वहां रहने वाले अरबों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहारा लेना ही पड़ेगा। ऐसा प्रतीत होता है कि यदि सत्ता की चाबी अरबों के हाथ में चली गई तो वे अरब विरोधी इजरायली सरकार का तख्तापलट कर देंगे और किसी ऐसे नेतृत्व को सत्ता में लाएंगे, जिससे अरबों को न्याय मिलने की आशा की जा सके।

उर्दू टाइम्स (2 नवंबर) ने अपने संपादकीय में टिप्पणी की है कि इस बार अरबों ने मतदान में सक्रिय रूप से भाग लेकर अपनी राजनीतिक शक्ति में इजाफा किया है। अरब पार्टियों ने कुल 19 सीटें हासिल की हैं। इससे

साफ है कि वे अपने पसंदीदा नेता को सत्ता के शिखर तक पहुंचाने की स्थिति में हैं। हालांकि, अभी तक विपक्षी नेता आइजेनकोट ने भी अरब पार्टियों का समर्थन लेने या उनके साथ मिलकर सरकार बनाने में कोई रुचि नहीं दिखाई है।

मुंबई उर्दू न्यूज (31 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि इजरायल में हुए चुनाव इस बात का प्रमाण हैं कि देश की जनता ने कट्टरपंथी नेतन्याहू को नकार दिया है। हालांकि, उनकी पार्टी 'लिकुड' को पहले की तुलना में अधिक सीटें प्राप्त हुई हैं और 27 सीटें जीतकर वह सबसे बड़े दल के रूप में उभरी है, लेकिन उनके गठबंधन को सिर्फ 53 सीटें ही मिल सकी हैं, जबकि सरकार बनाने के लिए 61 सांसदों का समर्थन आवश्यक है। इस बीच रूढ़िवादी यहूदियों की पार्टी 'यूनाइटेड तोराह जुडाइज्म' के कुछ नेता आइजेनकोट की सरकार को बाहर से समर्थन देने की संभावना पर विचार कर रहे हैं। इस पार्टी के पास सात सीटें हैं और अब तक यह नेतन्याहू के गठबंधन का हिस्सा रही है। यदि यह पार्टी आइजेनकोट का समर्थन करती है तो यह नेतन्याहू के लिए एक जबरदस्त राजनीतिक झटका साबित होगा।

हिंदुस्तान एक्सप्रेस (1 नवंबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि इजरायल के दोनों मुख्य गठबंधनों ने सार्वजनिक रूप से अरब पार्टियों के समर्थन से सरकार बनाने से इनकार कर दिया है। हालांकि, अरब नेता मंसूर अब्बास की पार्टी 'राम' वर्ष 2021 में इजरायल की गठबंधन सरकार में भागीदार रह चुकी है। इस बात की संभावना है कि आइजेनकोट का विपक्षी खेमा सरकार बनाने के लिए उनका बाहर से या परोक्ष समर्थन प्राप्त करने का प्रयास करेगा। दूसरी ओर, नेतन्याहू यह प्रयास कर रहे हैं कि दोनों में से कोई भी गठबंधन सरकार न बना सके ताकि इजरायल में पुनः चुनाव करवाए जाएं। नेतन्याहू ने चुनाव जीतने के लिए गाजा को फिलिस्तीनियों की कत्लगाह बना दिया



था और ईरान पर भी हमले किए थे, लेकिन अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प के साथ मिलकर चलने के बावजूद वे चुनाव में बहुमत प्राप्त करने में विफल रहे।

समाचारपत्र के अनुसार गादी आइजेनकोट इजरायल के सेना प्रमुख रह चुके हैं। उन्हें भी फिलिस्तीनियों और मुसलमानों के प्रति नेतन्याहू जैसा ही सख्त और विरोधी माना जाता है। उनका मानना है कि नेतन्याहू अपने सैन्य और राजनीतिक लक्ष्यों को हासिल करने में पूरी तरह विफल रहे हैं, इसलिए वे उन्हें सत्ता से हटाना चाहते हैं। हालांकि, एक बात तय मानी जा रही है कि यदि आइजेनकोट प्रधानमंत्री बन जाते हैं तो नेतन्याहू के खिलाफ चल रहे भ्रष्टाचार के मुकदमों में उनकी मुश्किलें बढ़ जाएंगी और उन्हें जेल भी जाना पड़ सकता है। जहां तक मुसलमानों और फिलिस्तीनियों का सवाल है, उनके लिए नेतन्याहू की हार पर जश्न मनाना खुद को धोखा देने जैसा है, क्योंकि उनके हितों के लिए नेतन्याहू और आइजेनकोट दोनों ही समान रूप से खतरनाक हैं।

हमारा समाज (31 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में इस बात पर चिंता जताई है कि अरब नागरिकों का प्रतिनिधित्व करने वाली पार्टियों को इस चुनाव में अच्छा खासा जन समर्थन मिला है, लेकिन इसके बावजूद सत्ता में उनकी सीधी भागीदारी नजर नहीं आती। दोनों गठबंधनों में से कोई भी सत्ता में आए वास्तविक शक्ति और निर्णय लेने का अधिकार यहूदी नेतृत्व के हाथों में ही रहेगा।

पाकिस्तान, कतर, तुर्किये और इंडोनेशिया के बीच रक्षा समझौता



एतेमाद (22 अक्टूबर) के अनुसार कतर की राजधानी दोहा में पाकिस्तान, तुर्किये, कतर और इंडोनेशिया ने 'बद्र समझौते' पर हस्ताक्षर किए हैं। तुर्किये के रक्षा मंत्रालय ने बताया कि इस समझौते पर पाकिस्तान के रक्षा मंत्री ख्वाजा मुहम्मद आसिफ, इंडोनेशिया के उप-रक्षा मंत्री यूसुफ जौहरी, तुर्किये के रक्षा मंत्री यासर गुलर और कतर के उप-प्रधानमंत्री एवं रक्षा राज्य मंत्री शेख सऊद बिन अब्दुलरहमान अल थानी ने हस्ताक्षर किए।

तुर्किये की सरकारी न्यूज एजेंसी 'टीआरटी' के अनुसार इस समझौते का मुख्य उद्देश्य चारों देशों के बीच रक्षा उत्पादन, तकनीकी हस्तांतरण, सैन्य प्रशिक्षण तथा अनुसंधान एवं विकास के क्षेत्र में आपसी साझेदारी को बढ़ावा देना है। इसके माध्यम से ये देश अपनी सैन्य उत्पादन क्षमताओं का लाभ उठाकर न केवल अपनी रक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करेंगे, बल्कि मित्र देशों की सैन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने में भी मदद करेंगे।

उल्लेखनीय है कि नाटो का सदस्य तुर्किये एक सशक्त सैन्य शक्ति है, जो लंबे समय से खाड़ी देशों और विशेष रूप से कतर की सैन्य क्षमता बढ़ाने में सहयोग कर रहा है। कतर में तुर्किये का एक स्थायी सैन्य अड्डा भी मौजूद है। इससे पहले तुर्किये ने परमाणु शक्ति संपन्न पाकिस्तान और सऊदी अरब के साथ 'मक्का रक्षा समझौते' पर भी हस्ताक्षर किए थे। उस त्रिपक्षीय करार में यह प्रावधान है कि यदि इन तीनों में से किसी एक देश पर कोई बाहरी हमला होता है तो उसे सभी पर हमला माना जाएगा।

हिंदुस्तान एक्सप्रेस (23 अक्टूबर) के अनुसार पाकिस्तान के टीवी चैनलों 'दुनिया न्यूज' और 'जियो न्यूज' की रिपोर्टों में कहा गया है कि यह समझौता चारों देशों को सैन्य दृष्टि से सशक्त बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसके तहत चारों देशों के बीच रक्षा सामग्री और सैन्य साजो-सामान के निर्माण में आपसी सहयोग किया जाएगा। बद्र समझौते के अंतर्गत चारों देशों ने एक साझा रूपरेखा तैयार की है, जिसमें रक्षा उत्पादन, सैन्य उपकरणों से जुड़े अनुसंधान और नई तकनीक विकसित करने में साझेदारी शामिल है। इसके अतिरिक्त सेनाओं को आधुनिक बनाने के लिए आपसी सहयोग से उच्चस्तरीय सैन्य प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाएगी और उन्हें अत्याधुनिक हथियारों से लैस किया जाएगा। इसके लिए विभिन्न संयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित किए जाएंगे। रक्षा उद्योगों में साझेदारी और

तकनीक अनुसंधान को प्रोत्साहन देने के साथ-साथ एक संयुक्त रक्षा नीति तैयार की जाएगी तथा इसके लिए आवश्यक वित्तीय व्यवस्था भी सुनिश्चित की जाएगी। यह समझौता ऐसे समय में हुआ है, जब पश्चिम एशिया में सुरक्षा के सामने नित नई चुनौतियां उभर रही हैं और क्षेत्रीय तनाव में लगातार बढ़ोतरी हो रही है।

एतेमाद (26 अक्टूबर) ने अपने संपादकीय में लिखा है कि इस समझौते के बाद रक्षा विशेषज्ञ यह सवाल उठा रहे हैं कि जब पाकिस्तान और तुर्किये पहले से ही 'मक्का रक्षा गठबंधन' के सदस्य हैं तो कतर और इंडोनेशिया के साथ मिलकर रक्षा उत्पादन के लिए एक नई रूपरेखा तैयार करने की आवश्यकता क्यों महसूस हुई? ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्य में इस रक्षा समझौते में कुछ अन्य मुस्लिम देश भी शामिल हो सकते हैं। हालांकि, अभी तक इस करार के तहत किसी एक देश पर हमला होने की स्थिति में अन्य देशों की सैन्य प्रतिक्रिया का कोई प्रावधान सामने नहीं आया है, लेकिन यह समझौता आर्थिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके माध्यम से सदस्य देश अपनी रक्षा उत्पादन क्षमताओं को एकजुट करके सैन्य उपकरणों के आधुनिकीकरण और निर्माण में वृद्धि कर सकेंगे।

दूसरी ओर, मक्का समझौता एक पूर्ण रक्षा गठबंधन है, जो इसमें शामिल देशों की सामूहिक सुरक्षा पर केंद्रित है। तुर्किये ने इस रक्षा समझौते के प्रस्ताव को अपनी संसद में पेश कर इसकी पुष्टि की है, जो यह संकेत देता है कि वह सऊदी अरब के सुरक्षा संकट में सक्रिय भूमिका निभाना चाहता है। इसके विपरीत 'बद्र समझौता' एक रक्षा उद्योग सहयोग संधि है, जिसका दायरा केवल रक्षा उत्पादन और उससे जुड़े उद्योगों के विकास तक ही सीमित है।

इथियोपिया में ईसाई–मुस्लिम दंगों में 60 ईसाइयों की मौत



अवधनामा (28 अक्टूबर) के अनुसार इथियोपिया के ओरोमिया क्षेत्र में मुसलमानों और ईसाइयों के बीच हुए खूनी संघर्ष में कम से कम 60 ईसाई मारे गए हैं और 20 से अधिक लोग गंभीर रूप से घायल हुए हैं। इस संबंध में इथियोपिया के ऑर्थोडॉक्स चर्च की सर्वोच्च परिषद ने बताया कि 20 अक्टूबर को अरसी जोन के मेर्टी जिले में हथियारबंद भीड़ ने ईसाई आबादी पर हमला किया, जिसमें कम से कम 14 लोगों की जान चली गई। इस दौरान एक चर्च को क्षतिग्रस्त करने के साथ-साथ 20 से अधिक मकानों को आग के हवाले कर दिया गया। इसके बाद 24 अक्टूबर को

शिरका जिले में हुए भीषण हमले में कम से कम 46 ईसाइयों की बेरहमी से हत्या कर दी गई। चर्च के प्रवक्ता ने कहा कि इन हिंसक घटनाओं से देश में विभिन्न समुदायों के बीच सद्भाव और शांति बनाए रखने के प्रयासों को गहरा आघात पहुंचा है।

चर्च ने संघीय सरकार से मांग की है कि ईसाई बहुल इलाकों में हमलों को रोकने के लिए तत्काल सुरक्षा बल तैनात किए जाएं। चर्च के प्रवक्ता ने यह आरोप भी लगाया कि इन हथियारबंद गुटों को कुछ बाहरी और पड़ोसी देशों से आर्थिक एवं सैन्य सहायता मिल रही है। गौरतलब है कि इथियोपिया में ईसाइयों और मुसलमानों के बीच लंबे समय से सशस्त्र संघर्ष चल रहा है। इथियोपिया के मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट के अनुसार पूर्वी अरसी क्षेत्र में हुए लक्षित हमलों में अब तक सैकड़ों नागरिक मारे जा चुके हैं। चर्च ने दुनिया भर के ईसाइयों से अपील की है कि वे इथियोपिया के ईसाइयों की सुरक्षा के लिए आवाज उठाएं और उन्हें हर संभव मानवीय सहायता उपलब्ध कराएं।

इथियोपिया में धार्मिक संघर्ष का इतिहास काफी पुराना है, जिसकी जड़ें वर्ष 1529 के युद्ध से जुड़ी हैं। इसे देश के इतिहास का सबसे विनाशकारी धार्मिक युद्ध माना जाता है। इस विवाद का मुख्य कारण यह था कि उस समय पहाड़ी क्षेत्रों पर ईसाइयों का साम्राज्य था, जबकि तटीय क्षेत्रों में मुस्लिम अदल सुल्तानों का शासन था। व्यापारिक मार्गों पर नियंत्रण को लेकर दोनों के बीच टकराव शुरू हुआ। 1529 में मुस्लिम नेता इमाम अहमद अल-गाजी ने ईसाइयों पर हमले की शुरुआत की और इथियोपिया के एक बड़े हिस्से पर कब्जा कर लिया। इस दौरान बड़े पैमाने पर ईसाइयों का नरसंहार हुआ और कई ऐतिहासिक चर्च नष्ट कर दिए गए। इस युद्ध ने तब और भीषण रूप ले लिया, जब ईसाइयों की ओर से पुर्तगाल और मुसलमानों की ओर से ऑटोमन साम्राज्य इस लड़ाई में कूद पड़े। अंततः इस युद्ध में इमाम अल-गाजी मारे गए।

19वीं सदी में ईसाई सम्राट योहानिस चतुर्थ ने मुसलमानों पर कड़े प्रतिबंध लगाते हुए उन्हें ईसाई धर्म अपनाने या देश छोड़ने का निर्देश दिया, जिसके परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर जबरन धर्मांतरण हुआ। वर्ष 1974 में ईसाई साम्राज्य का अंत हो गया। वर्तमान दौर में दोनों समुदायों के बीच नए सिरे से संघर्ष की शुरुआत 2006 के आसपास हुई। इसके बाद ओरोमिया क्षेत्र में अतिवादी मुस्लिम गुटों ने ईसाइयों को निशाना बनाना शुरू किया, जिसमें सैकड़ों लोग मारे गए और हजारों विस्थापित हुए। वर्ष 2019 में ओरोमो नेता जवार मोहम्मद के समर्थकों के आंदोलन के दौरान भड़की हिंसा में भी ओरोमिया में ईसाइयों को निशाना बनाया गया, जिसमें सैकड़ों लोगों की जान चली गई। इसके बाद वर्ष 2022 में गोंदर शहर में एक मुस्लिम अंतिम संस्कार के दौरान दोनों समुदायों के बीच सशस्त्र संघर्ष हुआ, जिसमें 20 से अधिक मुसलमान मारे गए। इसके बाद देश भर में ईसाइयों और मुसलमानों के बीच सशस्त्र संघर्ष शुरू हो गया। अक्टूबर 2026 में सशस्त्र विद्रोही संगठन 'ओरोमो लिबरेशन आर्मी' ने सत्ता पर कब्जा करने के उद्देश्य से अपना सशस्त्र संघर्ष और तेज कर दिया है।

लीबिया में ईरानी और अफगान नागरिकों के प्रवेश पर प्रतिबंध

सियासत (30 अक्टूबर) के अनुसार पूर्वी लीबिया सरकार ने अपने नियंत्रण वाले क्षेत्रों में ईरानी और अफगान नागरिकों के प्रवेश पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया है। यह पाबंदी सभी जमीनी, हवाई और समुद्री मार्गों पर लागू होगी। गृह मंत्रालय ने घोषणा की है कि इस समय पूर्वी लीबिया में जो भी

ईरानी और अफगान नागरिक बिना वैध निवास परमिट के रह रहे हैं, उन्हें चिन्हित कर देश से बाहर निकाल दिया जाएगा। इससे पहले सरकार ने जून महीने में सूडान, इरिट्रिया, इथियोपिया और सोमालिया के नागरिकों के प्रवेश पर भी रोक लगा दी थी।



वर्ष 2011 में लीबिया के शासक मुअम्मर गद्दाफी के तख्तापलट के बाद से यह उत्तरी अफ्रीकी देश गृहयुद्ध और अस्थिरता का शिकार है। वर्ष 2014 में लीबिया दो हिस्सों में बंट गया, जिनकी अपनी अलग-अलग सरकारें हैं। पूर्वी क्षेत्र की सरकार का नेतृत्व ओसामा हम्माद कर रहे हैं, जिसे सैन्य कमांडर खलीफा हफ्तार का समर्थन प्राप्त है। इस सरकार का मुख्यालय बेनगाजी में स्थित है। इस सैन्य गुट का देश के पूर्वी और दक्षिणी हिस्से के एक बड़े भूभाग पर नियंत्रण है। दूसरी ओर, संयुक्त राष्ट्र और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त सरकार का नेतृत्व प्रधानमंत्री अब्दुल हमीद दबीबा के हाथों में है, जिसका मुख्यालय राजधानी त्रिपोली में स्थित है।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा जून में जारी आंकड़ों के अनुसार लीबिया में इस समय नौ लाख से अधिक विदेशी प्रवासी रह रहे हैं। अब पूर्वी लीबिया की सरकार अवैध प्रवासियों की बढ़ती संख्या पर लगाम लगाना चाहती है, जिसके चलते उसने बिना वैध दस्तावेजों वाले विदेशी नागरिकों के निष्कासन का अभियान तेज कर दिया है। ■

मदीना यूनिवर्सिटी में 100 से अधिक इस्लामिक किताबों पर प्रतिबंध



मुंबई उर्दू न्यूज (30 अक्टूबर) के अनुसार सऊदी अरब की प्रतिष्ठित 'इस्लामिक यूनिवर्सिटी ऑफ मदीना' में 100 से अधिक इस्लामिक विद्वानों और चिंतकों की पुस्तकों पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। इस सूची में भारतीय उपमहाद्वीप के दो प्रमुख चिंतक- जमात-ए-इस्लामी के संस्थापक मौलाना अबुल आला मौदूदी और दारुल उलूम नदवतुल उलमा के पूर्व प्रमुख मौलाना अबुल हसन अली नदवी भी शामिल हैं। इनके अतिरिक्त मुस्लिम ब्रदरहुड के संस्थापक हसन अल-बन्ना की रचनाओं पर भी रोक लगाई गई है। जिन लेखकों की किताबें प्रतिबंधित की गई हैं, वे सभी इस्लामिक जगत के शीर्ष विद्वानों में गिने जाते हैं।

आश्चर्यजनक बात यह है कि भारत के इन दोनों प्रमुख इस्लामिक चिंतकों की पुस्तकों को प्रारंभ से ही अरब जगत के सभी प्रमुख इस्लामिक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में पढ़ाया जाता रहा है और दोनों को ही सऊदी अरब के प्रतिष्ठित 'शाह फैसल अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार' से भी सम्मानित किया जा चुका है। फिलहाल यह स्पष्ट नहीं है कि यह प्रतिबंध किस आधार पर और

किन कारणों से लगाया गया है। जिन अन्य प्रमुख लेखकों की किताबों पर रोक लगी है, उनमें सैयद कुतुब, मालेक बेन्नाबी, यूसुफ अल-करादावी, मोहम्मद अल-गजाली, अब्दुल्ला अज्जम, मुस्तफा अल-सिबाई, अब्दुल अजीज अल-तरीफी, सफर अल-हवाली, सलमान अल-ओउदा, तारिक रमजान और मुहम्मद बाकिर अल-सद्र आदि शामिल हैं।

गौरतलब है कि इससे पहले सऊदी अरब भारत से जुड़े बहुचर्चित तब्लीगी जमात की गतिविधियों पर भी प्रतिबंध लगा चुका है।

10 हजार से अधिक भारतीय सऊदी अरब में फंसे



उर्दू टाइम्स (23 अक्टूबर) के अनुसार उमराह अदा करने के लिए सऊदी अरब गए 10 हजार से अधिक भारतीय वहां फंस गए हैं। यमन के हूती विद्रोहियों के हवाई हमलों के कारण बड़ी संख्या में विमान सेवाएं बाधित या निलंबित हो गई हैं। इसके अतिरिक्त लाल सागर में हूतियों की नाकेबंदी के कारण समुद्री मार्ग से भी आवागमन संभव नहीं रह गया है। इस संकट से मक्का और मदीना में उमराह के लिए गए दुनिया भर के लगभग एक लाख यात्री प्रभावित हुए हैं, जिनमें भारतीयों की संख्या कम से कम 10 हजार बताई जा रही है।

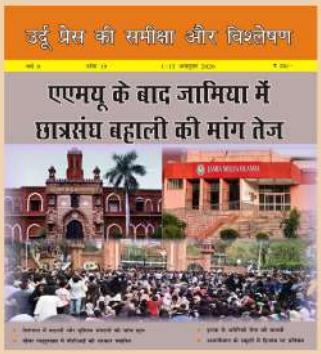
ऑल इंडिया मजलिस-ए-इत्तेहादुल मुस्लिमीन के अध्यक्ष असदुद्दीन ओवैसी ने भारत सरकार से इस मामले में तत्काल हस्तक्षेप करने की मांग की है। ओवैसी के अनुसार तेलंगाना और आंध्र प्रदेश सहित देश के विभिन्न हिस्सों के हजारों यात्री सऊदी अरब में फंसे हुए हैं और उन्हें भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। उनके पास न तो ठहरने की उचित व्यवस्था बची है और न ही खाने-पीने का सामान खरीदने के लिए पर्याप्त धनराशि है। दूसरी ओर, जम्मू कश्मीर के मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला ने भी कहा है कि कश्मीर से उमराह पर गए बड़ी संख्या में नागरिक वहां फंसे हुए हैं। उन्होंने भारत सरकार से मांग की है कि फंसे हुए नागरिकों को स्वदेश वापस लाने के लिए विशेष विमानों की व्यवस्था की जाए और उनसे कोई अतिरिक्त किराया न लिया जाए।

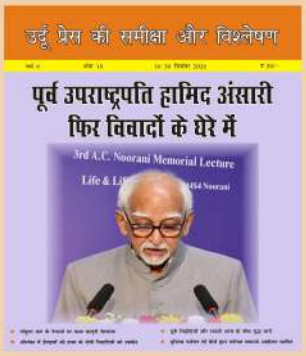
इस बीच भारतीय विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता रणधीर जायसवाल ने संवाददाताओं को बताया कि केंद्र सरकार ने पिछले एक सप्ताह में लगभग तीन हजार फंसे हुए यात्रियों को उपलब्ध उड़ानों के जरिए भारत वापस लाया है। उन्होंने स्पष्ट किया कि सुरक्षा कारणों से इंडिगो, आकासा एयर और एयर इंडिया जैसी भारतीय विमानन कंपनियों ने सऊदी अरब के लिए अपनी कई उड़ानें अस्थाई रूप से रद्द कर दी हैं। प्रवक्ता ने बताया कि रियाद और जेद्दा में स्थित भारतीय दूतावासों को फंसे हुए नागरिकों के भोजन व ठहरने की व्यवस्था करने के निर्देश दिए गए हैं, जिसमें सऊदी अरब स्थित सामुदायिक संगठनों की भी मदद ली जा रही है। सरकार ने सभी प्रभावित भारतीयों से दूतावास के संपर्क में रहने की अपील की है।

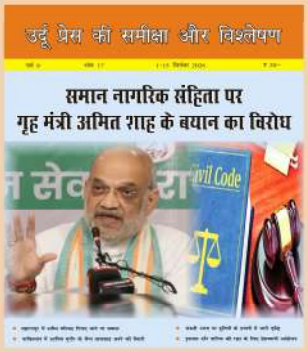
औरंगाबाद टाइम्स (23 अक्टूबर) के अनुसार सऊदी अरब के हवाई अड्डों पर हुए हूती हमलों में अब तक तीन भारतीय नागरिकों की मौत हो चुकी है, जबकि एक दर्जन से अधिक लोग घायल हुए हैं।

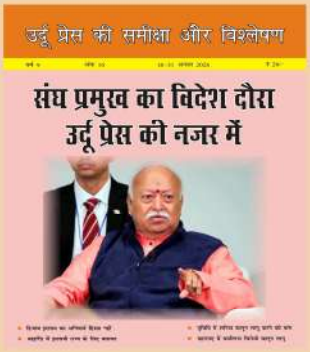
एतेमाद (28 अक्टूबर) के अनुसार हूती हमलों के कारण अब तक पांच हजार से अधिक उडानें रद्द की जा चुकी हैं। इन हमलों में 20 से अधिक लोगों की जान जा चुकी है, क्योंकि हूती विद्रोही लगातार रियाद, दम्माम और आभा के हवाई अड्डों को अपना निशाना बना रहे हैं।

RNI No. DELHIN/2017/72722

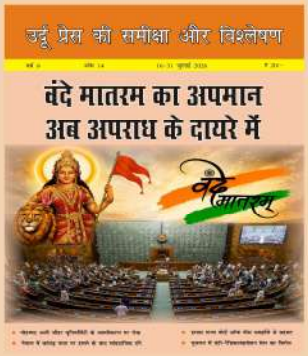


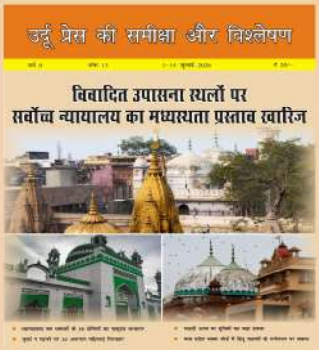




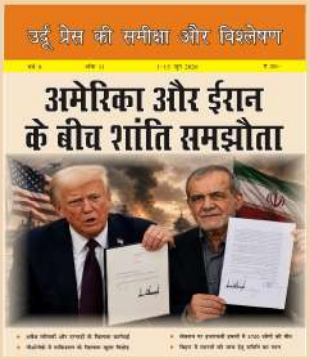












भारत नीति प्रतिष्ठान
India Policy Foundation
डी-51, प्रथम तल, हौजखास, नई दिल्ली-110016
दूरभाष : 011-79687620
ईमेल : info@ipf.org.in, indiapolicy@gmail.com
वेबसाइट : www.ipf.org.in